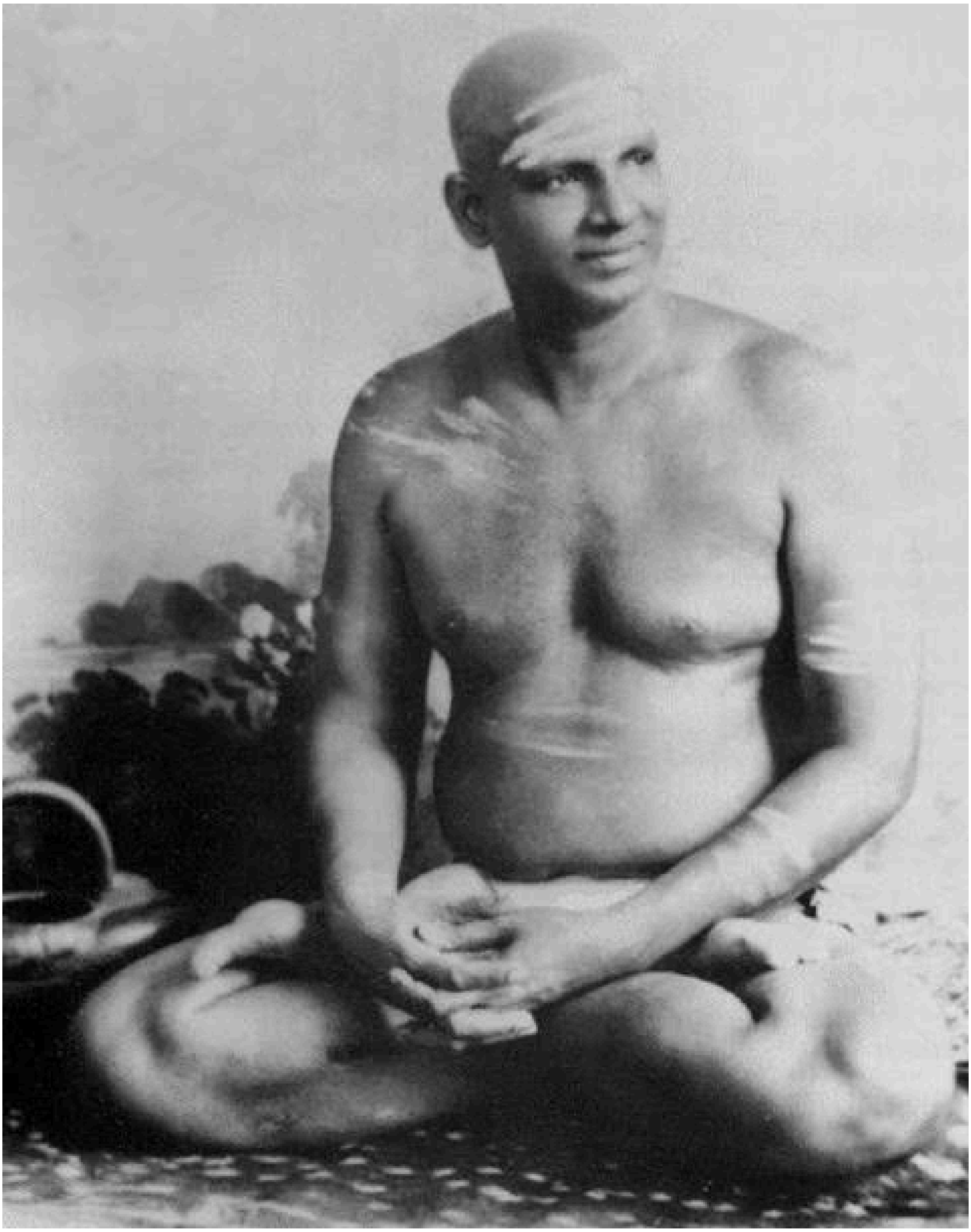
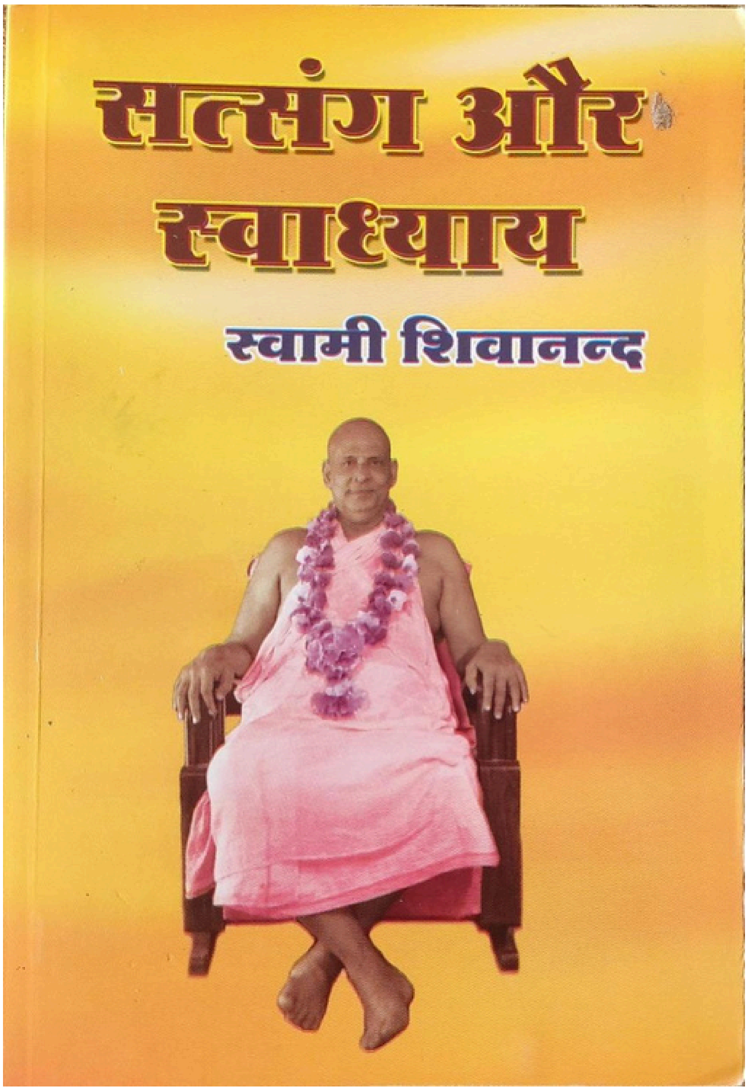




सतं्संग और स्वाध्याय

सत्संग और स्वाध्याय की गररमा, महत्ता तथा जीवन-ननमााण की क्षमता

लेखक श्री

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

अनुवादक

श्री राजेश्वर नारायण नसनहा

प्रकाशक

द निवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : नशवानन्दनगर-२४९१९२

नजला : नटहरी गढ़वाल,उत्तराखण्ड(नहमालय),भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम नहन्दीसंस्करण:१९६६

नितीय नहन्दीसंस्करण:१९९९

तृतीय नहन्दीसंस्करण२००१

चतुथा नहन्दीसंस्करण:२०१८

(५०० प्रनतयााँ)

HS 289

PRICE: 60/-

'द निवाइन लाइफ सोसायटी , नशवानन्दनगर'के नलए
स्वामी पद्मनाभानन्द िारा प्रकानशत तथाउन्हीं के िारा'योग-वेदान्त फारेस्ट
एकिोमी प्रेस, पो. नशवानन्दनगर,नज.नटहरीगढ़वाल,उत्तराखण्ड,
नपन २४९ १९२'मेंमुनित।
For online orders and Cataloguevisit:disbooks.org

प्रकाशकीय वक्तव्य

महाप्रभु श्री स्वामी नशवानन्द जी महाराज ने पावन सत्संग और स्वाध्याय पर नवनभन्न सथानों पर जो-कुछ नवचार प्रकट नकये हैं, उनका ही संकलन इस पुस्तक में प्रकानशत नकया गया है।

इस पुस्तक के पररनशष्ट में उक्त नवषय पर नवशेष प्रकाश िाला गया है। उसमें श्री स्वामी नचदानन्द जी महाराज ने गुरु और सन्त की संगनत के सूक्ष्म तत्त्व का नवशद नवश्लेषण नकया है तथा नकस पररस्सथनत में साधक सत्संग से अनधक लाभ उठा सकता है, यह भी स्पष्ट रूप से दशााया है।

यह नवषय कुछ गूढ़-सा है, नकन्तु सभी आध्यास्िक साधकों के नलए आवश्यक है। हमें पूणा आशा है नक इन पृष्ठों से अनेक लोगों की जीवन-पुस्तक में सुन्दर नये अध्याय का श्रीगणेश होगा।

-द शिवाइन लाइफ सोसायटी

अनुवादक के दो शब्द

बात सन् १९२२ की है। एक बंगाली नमत्र ने मुझे बंगला में प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी नववेकानन्द जी महाराज िारा नलस्खत 'राजयोग' ग्रन्थ नदया। उसे पढ़ तो गया, ग्रन्थ से पे्रम भी
थोडा-बहुत हो गया, पर समझ कुछ भी नहीं ंसका।

उसके बाद वषों बीत गये, कोई सहायक नहीं ंनमला। प्रभु-कृपा हुई नहीं।ं इधर पााँच-सात
वषा पूवा 'योग-वेदान्त' पनत्रका देखने को नमली, तब महाप्रभु स्वामी नशवानन्द जी के पावन चरणों ं
में श्रद्धा उत्पन्न हुई, पर सत्संग कहााँ नमला! वैसा भाग्य ही नहीं ंथा। जब भी ननराश होता,
ननशाकाल में उनसे प्राथाना करता- 'सन्मागा बताइए।' वे स्पष्ट आदेश- सान्त्वना देते- 'ननराश मत
होओ ! साधना-आराधना का क्रम सतत जारी रखो।'

उनके सद्ग्रन्थ 'राजयोग', 'मन और उसका रहस्य' आनद अनेक बार पढ़ गया, उनकी
कुछ नचत्ताकषाक पंस्क्तयााँ हृदयंगम हुईं और मन-ही-मन में दोहराता रहा। तभी एक ननशा में
आलोक नमला- 'क्ों ंनहीं ंयथाशस्क्त परम श्रदे्धेय सन्त के कुछ एक सद्ग्रन्थों ंका नहन्दी रूपान्तरण
नकया जाये।'

भाषा आनद का ज्ञान है नहीं।ं अज्ञानी हाँ, अन्धकार में भटक रहा हाँ। इस 'सत्संग और
स्वाध्याय' सद्ग्रन्थ का नहन्दी रूपान्तर करते समय मुझे जो आनन्द नमला है, अवणानीय है। मूक हाँ।

नहन्दी रूपान्तर में जो दोष हैं, होंगें ही, वे मेरी अज्ञानतावश हैं; जो उत्कृष्ट अनभनव
गररमा, आलोक है, उनके नलए श्री श्री ग्रन्थकार के पावन पाद-पद्म में साश्रु नतमस्तक ।

-राजेश्वर नारायण शसनहा

सत्संग-मनहमा

सत्संगत्वे शनिःसं गत्वंनिःसं गत्वेनमोहत्वम्।

शनमोहत्वेशनश्चलशितत्त्वंशनश्चलशितत्ते जीवनुमुक्तिः।।

श्रे्रेष् महिाओं ़ की सतं्संगनत से मनुष्य ननःसूपृह बन जाता है। वह वैराग्य प्राप्त करता है। वह सांसाररक मनुष्यों ़ की संगनत पसन्द नहीं ़ करता। तब वह ननमोहव की स्स्थनत उपलब्ध करता
है। वह मोह-रनहत हो जाता है। तब उसका मन स्स्थर तथा एकाग्र हो कर ननज-स्वरूप में ननवास करता है और तब वह मोक्ष को प्राप्त करता है। -शंकराचाया

कस्तरशत कस्तरशत मायाम् ?
यिः संगांस्त्यजशत यो महानुभावं सेवते, शनममो भवशत ।

कौन तरता है? दुस्तर माया से कौन तरता है? जो सब संगों ़ का पररत्याग करता है, जो महानुभावों ़ की सेवा करता है और जो ममता-रनहत होता है।

महत्संगसुतु दुलमभोऽगम्योऽमोघश्च ।

महापुरुषों ़ का संग दुलाभ, अगम्य और अमोघ है।

लभ्यतेऽशि तत्कृियैव ।

उस भगवान् की कृपा से ही महापुरुषों ़ का संग भी नमलता है।

-नारद-भक्त-सूत्र

शिनु सतसंग शििेक न होई।
राम कृिा शिनु सुलभ न सोई।।

सन्तों ़ की संगनत के नबना नववेक-वैराग्य उत्पन्न नहीं ़ होता और यह पावन सत्संग प्रभु राम की कृपा नबना उपलब्ध नहीं ़ होता।

सठ सुधरशहं सतसंगशत िाई।
साधु-सन्तों ़ का पावन सत्संग प्राप्त कर अपावन मानव भी पावन बन जाता है।

सतसंगत मुद मंगल मूला ।

सत्संग परमानन्द का मूल ही है।

-रामिररतमानस

सन्तों ़ से ज्ञान प्राप्त कीनजए। वे ही आपके त्राता है। उनके उपदेशों ़ के अनुसार आचरण कीनजए। वे आपकी सहायता करेंगे, मागा-दशान देंगे और आपको आपके ननर्नदाष्ट लक्ष्य तक पहुँचा देंगे।

* * *

अपने वास्तनवक आनन्द ननकेतन की ओर चलते चलो। संसार के मरुसथल में काफी भ्रमण कर चुके । अब सन्त-रूपी मरुद्यानों ंमें नवश्राम करो। उनकी नशक्षाओं ंका पालन करो और अपने स्वरूप में प्रनतनष्त हो जाओ।

* * *

सतं्संग ही जीवन-नौका है। नववेक नदशासूचक मागादशाक यन्त्र है। वैराग्य ही आश्रयहै।हे आेि-सारनथ ! इस संसार सागर में अपने जीवन-पोत को ननभायतापूवाक चलाओ औरउसपार अमर जीवन के तट पर पहुाँच जाओ।

-स्वामी शिवानन्द

शवषय-स्रिी

१. सत्संग का अथा

'सत्संग' शब्द 'सत्' और 'संग' इन दो शब्दों ंके योग से बना है। 'सत्' का अथा है परम सत्ता, जो ब्रह्म है। 'सत्' ब्रह्म का अपररहाया स्वभाव है। यह सभी पररवतानशील वसुतुओं ंमें अकुषुण्ण रहता है। एकमात्र यह सत् ही इस नामरूपिाक जगत् को धारण करता है।

वही 'सत्' सवाव्यापक, सवाज्ञ, सवाशस्क्तमान् आनद औपलाक्षनणक गुणों ंसे सम्बद्ध हो कर ईश्वर या परमािा कहलाता है। संक्षेप में 'सत्' से ईश्वर और ब्रह्म दोनों ंका बोध होता है; क्योंनक अन्ततः दोनों ंएक ही हैं और एक ही सत्य के अनभव्यंजक हैं।

'संग' का शब्दाथा है संगनत या मेल। सदा प्रभु की संगनत में रहना या ब्रह्म में स्सथत रहना-यह हुआ 'सत्संग' का शास्ब्दक अथा। परनुतु जब तक अनवद्या रहती है, तब तक ब्रह्म की अपरोक्षानुभूनत नहीं ंहो सकती। ज्ञान से अनवद्या का नाश होने पर 'सत्' स्वयं प्रकट हो जाता है। यहीसवोच्च सत्संग है।

दूसरी सम्भावना यह है नक हम अपनी अव्यनभचाररणी भस्क्त से प्रभु को प्रसन्न करें नजससे वे हमारी भावना के अनुसार सौम्य रूप धारण कर वैसे ही हमारे साथ क्रीडा करें जैसे गोनपकाओं ं के साथ की थी। परन्तु इस आनन्दमयी स्सथनत की प्रास्प्त का साधन भी सत्संग ही कहलाता है; क्ोंनक साधन साध्य से नभन्न न होने के कारण साध्य के नाम से अनभनहत होता है।

ज्ञाननयों ंकी संगनत से ही (ननगुाण अथवा सगुण) ब्रह्म का ज्ञान होता है, अतः उसे भी सत्संग ही कहते हैं। इस सन्दभा में सत्संग का अथा है सतुपुरुषों ंकी संगनत। सतुपुरुष वे हैं नजन्ोंनें या तो 'सत्' का साक्षात्कार कर नलया है या उसके साक्षात्कार के नलए प्रयत्नशील हैं। नजस व्यस्क्त ने अहंभाव, लोभ, काम-वासना आनद का त्याग कर नदया है, वह सतुपुरुष है। नजन लोगों ंने समदृनष्ट, मन का सनुतुलन तथा प्रभु में अव्यनभचाररणी भस्क्त प्राप्त की है, वे सतुपुरुष हैं। जो लोग शास्न्त, आनन्द, सन्तोष, आजाव, ननभायता, नवनम्रता, ओजपूणा वाणी तथा नदव्य आभापूणा व्यस्क्तव से सम्पन्न हैं, वे सतुपुरुष हैं।

एकमात्र भगवतूकृपा से सतंसंग सम्भव

नकसी सतुपुरुष के सम्पका में आना बडा ही कनठन है और उससे भी कनठन है सतुपुरुष को पहचानना। जागनतक संस्कारों ंसे युक्त व्यस्क्त अपने ही पैमाने से सन्त को मापना चाहते हैं और उस पैमाने के अनुकूल न पा कर उसे झूठूा सन्त मान कर त्याग देते हैं, नजसके पररणाम-स्वरूप वे सन्त-सम्पका के तात्कानलक लाभ से वंनचत रह जाते हैं। परनुतु नफर भी सत्संग का अनमट प्रभाव सम्बस्न्धत व्यस्क्त पर पडता ही है, उसे चाहे वह शीघ्र अनुभव करे अथवा कुछ समय के बाद। भस्क्त-सूत्र में भगवान् नारद कहते हैं-"महिााओं ंका संग दुलाभ, अगम्य और अचूक है।"

महापुरुषों ंकी संगनत प्राप्त करना दुष्कर है। महापुरुषों ंके समाज में नकस प्रकार तथा कब कोई मनुष्य प्रवेश पा सकेगा, यह कहना सम्भव नहीं;ं परनुतु यनद महापुरुषों ंकी संगनत एक बार भी प्राप्त हो गयी, तो उसका प्रभाव नचरसथायी रहता है। भगवत्प्रेम मुख्यतः सतुपुरुषों ंकी कृपा अथवा प्रभु की करुणा के संस्पशा से ही प्राप्त होता है। इस भाँनत सत्संग भी प्रभु की कृपा से ही प्राप्त होता है; क्ोंनक भक्त और भगवान् में कोई अन्तर नहीं ंहै।

भगवान् और भागवत में कोई अन्तर नहीं ंहोता है। दोनों ंअनभन्न हैं। भागवत स्वयं भगवान् है।शुरुनत की घोषणा है नक 'ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है।' ब्रह्म के समान ही सन्तों ं कीमनहमा अपार तथा अनन्त है।

प्रभु तथा उनके भक्तों ंके सम्बन्ध पर प्रकाश

गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं: "यद्यनप मैं सब भूतों ंमें समभाव से व्यापक हाँ, न कोई मेरा अनप्रय है और न नप्रय है; परनुतु जो भक्त मेरे को प्रेेम से भजते हैं, वे मेरे में और मैं भी उनमें प्रत्यक्ष प्रकट हाँ (गीता : ९-२९)।" यद्यनप सूया की नकरणें सभी पर समान रूप से पडती हैं, पर हीरा अन्य सभी वसुतुओं ंकी अपेक्षा अनधक चमकता है। यद्यनप एक व्यस्क्त के पास

उसके मकान में सैकडों ं कमरे होंगें ; नकनु्तु वह अपने ननजी सुसस्ति कमरे में ही आनन्द प्राप्त करता है। उसी प्रकार यद्यनप प्रभु सबके हैं, नकनु्तु वे सन्त के उस हृदय में अनधक स्पष्ट रूप से प्रकट होते हैं, जो पनवत्रता से उज्ज्वल हो गया है तथा जो करुणा, दया, आि-संयम, समदृनष्ट तथा ज्ञान के बहुमूल्य रत्नों ं से जनडत है।

भगवान् और उनके भक्त का सम्बन्ध तीन प्रकार का बतलाया गया है। प्रथमतः दोनों ं अनभन्न हैं, क्ोंनक सन्त का ईश्वर से पृथक् कोई अस्स्तव नहीं ं है। हरर-इच्छा ही उनके जन की इच्छा है। सूया की ज्योनत वास्तनवक सूया में नमल गयी है। नमक का पुतला सागर में नमल कर तिूप हो गया है। ओस की बूूँदें नवशाल सागर में प्रवेश कर गयी हैं। जीव नशव में लीन हो गया है। जब अहं जाता रहा, तो हरर और हरर के जन में कोई अन्तर नहीं ं रहा।

दूसरे दृनष्टकोण से देखने पर सन्त से ईश महान् हैं; क्ोंनक सन्त तो के वल पथ हैं। मानव सन्त के दशान से ही सन्तोष नहीं ं पाता, अतः पूछता है—"महाराज ! भगवत्प्रास्प्त का मागा कृपा कर बतायें। परम पुरुषाथा अथाात् मोक्ष की प्रास्प्त के नलए मैं क्ा करूूँ ?" इससे यह प्रमानणत होता है नक सन्त से भगवान् श्रेष् हैं; परनु्तु यह सापेनक्षक दृनष्टकोण है। बन्धन में पडा मानव सन्त के सम्पका में आ सकता है; नकनु्तु उसके नलए सन्त-चेतना का, जो नक ईश से अनभन्न है, अनुभव करना अनत-दुष्कर है। जब तक उसे इस चेतना की अनुभूनत नहीं ं होती, तब तक सन्त उसके नलए नकसी लक्ष्य के पथ मात्र ही हैं; पर वास्तनवक बात तो यह है नक सन्त लक्ष्य और पथ दोनों ं ही हैं।

जहाूँ तक सन्त लक्ष्य और पथ दोनों ं ही हैं, वह ईश से भी महान् समझा जाता है। सन्त तुलसीदास का कथन है- "मेरी दृढ़ आसथा है नक श्रीराम का भक्त उनसे भी महान् है। सभी सन्त एक स्वरसेयहीउद्घोनषतकरतेहैं।"

यद्यनप प्रभु सवाव्यापक हैं; नकनु्तु गुरु-कृपा के नबना उनका साक्षात्कार नहीं ंहो सकता है। सन्त अथवा गुरु ही इसके एकमात्र मागा हैं। संसार से मुस्क्त का अन्य कोई मागा नहीं ंहै।

सन्त ही ईश्वर के सजीव प्रतीक हैं। सन्त के दशान, उनका नचन्तन, स्मरण, पाद-संस्पशा, उनके संग वाताालाप आनद से व्यस्क्त में प्रभु-कृपा की अजस्र धारा प्रवानहत होने लगती है, नजससे वह आध्यास्कि ज्ञान के चरम नशखर पर शीघ्र आरूढ़ हो जाता है।

तुलसीदास जी ने सत्संग की मनहमा का बडे ही ओजस्वी शब्दों ंमें वणान नकया है:

"तात स्वगम अिवगम सुख, धररय तुला इक अंग।
तुलै न ताशह सकल शमशल, जो सुख लव सत्संग ।।"

अथाात् तराजू के एक पलडे पर स्वगा तथा अपवगा के सारे सुख रखे जायें तथा दूसरे पलडे पर केवल क्षण-भर का सत्संग हो, तो सत्संग का पलडा ही भारी होगा।

संसार-सागर को सन्तरण करने के नलए सत्संग के अनतररक्त अन्य कोई नौका नहीं ंहै। वह बडा ही भाग्यशाली है नजसे सतुपुरुष का सम्पका प्राप्त हो चुका है। उससे भी अनधक भाग्यशाली वह है नजसे सन्त-चरणों ंमें अटूट श्रद्धा है और सवाानधक भाग्यवान् तो वह है नजसने सन्त-चेतना के साथ तादात्म्य साध नलया है।

यनद नकसी के नलए सन्त-सम्पका सम्भव न हो तो उसे उपननषद्, गीता, योगवानसष्,
रामायण, भागवत आनद सद्ग्रन्थों ंसे सम्पका रखने का प्रयत्न करना चानहए। उसे तीथावास करना
चानहए और वहााँ प्रभु-मनहमा के श्रवण और कथन में संलग्न रहना चानहए। यह भी उसके नलए
सतं्संग ही है। नजस नकसी काया से हृदय पावन बनने में सहायता नमले, वह सभी सतं्संग ही माने जाने चानहए।

२. सतं्संग की मनहमा

सतं्संग, ज्ञाननयों,ं सन्तों,ं योनगयों,ं संन्यानसयों ं तथा महात्माओं ं के साथ संगनत तथा उनका सुयश औरमनहमाअवणानीयहै।जागनतकलोगों ं केपुरानेअपावनसंस्कारों ं कोनवनष्टकरनेके नलए क्षण-भरकीसतं्संगनतपयााप्तहै।नसद्धपुरुषों ंकीसशक्तधारा,नचत्ताकषाकआभातथा आध्यास्कि कम्पन का सांसाररक मनुष्यों ं पर बडा प्रभाव पडता है। महात्माओं ं की सेवा से नवषयी मनुष्यों ं का मन शीघ्र ही पावन हो जाता है। सतं्संग मन को महानता के नशखर पर पहुाँचा देता है। नजस प्रकार नदयासलाई की एक काठी रुई की नवशाल गााँठ को कुछ क्षणों ं में ही भस्मसात् कर देती है, उसी प्रकार सन्तों ं की संगनत नवषय-नवकार और अपावन संस्कार को अल्प काल में ही
नष्ट कर देती है। तीव्र वैराग्य तथा मोक्ष की ज्वलन्त आकांक्षा पैदा करने का एकमात्र मागा सतं्संग,
के वल सतं्संग है।

पावन सन्तों ्की संगनत ज्ञान और भस्क्त उत्पन्न करने को पयााप्त है। नवद्या उनमें ही उनदत होती है नजनके दोष सत्संग के बल से नष्ट हो गये हैं। नवद्या उत्पन्न करने तथा सभी दोषों ्को शेष करने की स्वतन्त्र शस्क्त सत्संगनत में है।

जो पापों ्से अपावन बन गये हैं, उनके हृदय सन्त पुरुषों ्की प्राणदानयनी वाणी से पावन हो जाते हैं। वे ही प्रभु के पाद-पद्म में अन्ततः पहुँच पाते हैं। यह प्रमानणत करता है नक सन्त पुरुषों ्की वाणी में आि-दशान की शस्क्त तथा प्रभु-पाद-पद्म में पहुँचाने की क्षमता है।

सत्संग से क्रमशः प्रभु-दशान

इसके नलए प्रथम काया है धानमाक और सन्त पुरुषों ्की संगनत तथा उनकी सेवा। ऐसी संगनत और सेवा से स्वभाव की नसस्द्ध तथा परम प्रभु की प्रास्प्त होती है। उसके बाद वैराग्य या इस संसार की सभी वसुतुओं ्के प्रनत ननवृनत्त पैदा होती है और दूसरे, ईश के नलए एकान्त इच्छा। यह है भस्क्त। जब भस्क्त पररपक्व हो जाती है, वह मानव प्रभु का नप्रय बन जाता है और इस पे्रम के कारण, प्रभु उसे अपना बना लेते हैं। तब प्रभु के प्रत्यक्ष दशान होते हैं।

नववेकानन्द ने रामकृष्ण परमहंस का सत्संग ग्रहण नकया था। ज्ञानदेव ने ननवृनत्तनाथ का सत्संग पाया था। गोरखनाथ ने मत्स्येन्द्रनाथ का सत्संग पाया था। हर वसुतु में प्रभु के दशान, हर रूप में उनके रूप का अनुभव-इस भावना का सतत अभ्यास ही स्वतः महान् पावन सत्संग है। महाि्ाओं ्को शत-शत प्रणाम जो 'सत्संग' कराते हैं, वे भक्त भी धन्य हैं जो इस सत्संग में सस्निलत होते हैं। संगनत से तथा भक्तों ्के साथ वाताा से भस्क्त जाग्रत होती है। नजस प्रकार अनग्न से अनग्न प्रज्वनलत होती है, उसी प्रकार हृदय में भी हृदय से पे्रमानग्न प्रज्वनलत होती है। भगवान् श्रीकृष्ण का सिचन है- "ज्ञानी अपनी अगाध श्रद्धा से मेरी अचाना करते हैं, उनका मन मुझमें लीन है, उनका जीवन मुझमें आप्लानवत है, एक-दूसरे के प्रकाश से आलोनकत, सतत केवल मेरा ही गुणानुवाद करने वाले वे मेरे नप्रय श्रद्धालु भक्त सदा प्रसन्न और सनुतुष्ट रहते हैं।"

पूवी देशों ्में छात्रों ्को सन्त पुरुषों ्की संगनत करने तथा उनके सिचन श्रवण करने का परामशा नदया जाता है, तानक उनमें भगवत्-पे्रम और आतुरता का आलोक प्रज्वनलत हो। केवल सशक्त आि ही एकान्त का रसास्वादन कर आि-नवभोर हो सकता है। साधकों ्को जो सुअवसर नमले, उससे लाभ उठाना चानहए, तानक सत्संग से उनकी आकांक्षाएँ बलवती बनें।

जो स्वयं आि-नचन्तन नहीं ्कर सकते

इसनवश्वमेंबहुतथोडेलोगऐसे होंगें, जो स्वयं सत्-नचन्तन कर सकते हों,् जो सनिचार करसकतेहों ्तथासत्यान्वेषणमेंअपनी मेधा पर ननभार करते हों।् ये थोडे लोग, वास्तव में अपने गुरुयानशक्षकस्वयंहैंतथाउन्हेंनकसी नशक्षक की आवश्यकता नहीं।् उनका सत्संग सवाननयन्ता का ध्यान ही है।

जो लोग स्वयं सही रूप में सोच नहीं ंसकते तथा अपनी भावना, नवचार और काया पर ननभार नहीं ंकर सकते, जो भ्रम और वासना के प्रवाह में बह जाते हैं, उनकी संख्या मानव- समाज में अनधक है। ऐसे लोगों ंको ज्ञानी तथा सद्गुरु की आवश्यकता है तानक वे सन्मागा पर अपना जीवन चला सकें। उनका सत्संग उन गुरु या नशक्षकों ंकी सेवा करना, उनके संसगा में ननवास करना, प्रत्यक्ष ननदेश प्राप्त करना तथा उनके सदाचरण का अनुगमन करना है, जो ज्ञानी और पनवत्र हैं।

सचे्चे साधक ही सत्संग के वास्तनवक महत्त्व को जान पाते हैं। सच्चा सत्संग जीवन-संग्राम का सामना करने, प्रलोभनों ंपर नवजय प्राप्त करने, अन्तनननानहत वासनाओं ंका उनू्मलन करने तथा मन को नदव्य सद्गुणों ंसे आपूररत करने के नलए अन्तः आध्यास्कि शस्क्त प्रदान करता है।

सत्संग बुराई को भलाई में बदल देता है। ननयनमत सत्संग से ईश्वर और धमाग्रन्थों ंमें श्रद्धा तथा भगवान् में अनुराग एवं भस्क्त का शनैः-शनैः नवकास होता है। महापुरुषों ंके संग से पापी के भी उद्धार की आशा की जा सकती है। सत्संग के प्रभाव से दुष्ट जगाई, मधाई तथा िाकू रत्नाकर सन्त बन गये।

सत्संग ही मनुष्य को पावनकारी तथा ज्ञानप्रदायक वसु्तुओं ंमें सवाश्रेष् है। सत्संग ही जीवन के सभी रोगों ंका एकमात्र ननदान है। सत्संग से बढ़ कर पे्ररक, उन्नायक और सान्त्वनाप्रदायक अन्य कोई भी वसु्तु नहीं ंहै। सत्संग जीवन का रस है, नवचारों ंका अमृत तथा जीवन का आनन्द है। परमानन्द की प्रास्प्त के नलए सत्संग के अनतररक्त अन्य कोई मागा नहीं ंहै। कोई भी वसु्तु इतनी महान् नहीं, ं इतनी आवश्यक नहीं, ं इतनी अपररहाया नहीं, ं इतनी आनन्ददायक नहीं, ं नजतना नक सत्संग। एकमात्र यही मागा है। इसके अनतररक्त अन्य कोई मागा नहीं ंहै।

३. सतं्संग भवन - एक तात्कानलक माँग

सतं्संग-भवन ही तात्कानलक आवश्यकता है। वहाँ बहुत से लोग एकनत्रत हो सकते हैं। जब लोग एकनत्रत हो कर प्रभु का नाम-स्मरण तथा कीतान करते हैं, तब महान् आध्यास्कि शस्क्त का प्रादुभााव होता है। सतं्संग की यह मनहमा है। यनद आप एक कमरे में बन्द रह कर नाम-जप और
ध्यान करें, तो आपकी उतनी तीव्र प्रगनत नहीं ़होगी; परनु्तु यनद आप एक छोटा सतं्संग-दल बनायें
और सभी नमल कर साथ ही जप और ध्यान करें, तो आध्यास्कि शस्क्त जगेगी और सभी को उससे सहायता नमलेगी। आप तीव्र और आश्चयाजनक प्रगनत करेंगे। जब आप सतं्संग में भाग लेते
हैं, तो अपनी समस्त सांसाररक नचन्ताओं ़को भूल जाते हैं। उस समय आप सवाथा नवीन वातावरण
में रहते हैं।

आज के युग में सतं्संग ही मनुष्य में नदव्य पररणनत ला सकता है। मनुष्य के कानों ़में
सनिचार सदा गूूँजते रहने चानहए, तभी उसका हृदय पररवनतात होगा।

आजकल व्यापार में इतनी बेईमानी घर कर गयी है नक सभी वस्तुुओं ़में नमलावट पायी
जाती है। खाद्य-सामग्री में नमलावट का बोलबाला है। मनुष्य स्वाथी हो चला है, उसमें कताव्य की
भावना रही नहीं।़ मृतुयु के समय आपका नववेक आपको चुभेगा। अभी या मृतुयुकाल में या उसके
अनन्तर कभी भी आपको माननसक शास्न्त नहीं ़नमलेगी। बेईमानी आपके नववेक का हनन करती है।
यह आिहत्या से भी खराब है। यह तो अपने को ही मारने के समान है। ईमानदार बनो। शुद्ध
हृदय, स्वच्छ मानस, नननवाकार नववेक रखो। यनद धनहीन भी हो, तो प्रसन्न रहोगे। यनद ईमानदार
हो, तो नवश्व की समस्त सम्पदाएँ आपकी होंगी।

सवात्र सतं्संग-भवन का ननमााण हो

वह व्यस्क्त धनी नहीं ़ नजसके पास बैंक में बहुत धन जमा है। धनी तो वह व्यस्क्त है
नजसका हृदयनवशालहै।प्रते्येकसद्गुणकरोडों ़रुपयेसेअनधकमूल्यवान्है।दानशीलहृदयका
नवकास कीनजए।आपअपनीपत्नीऔरबच्चों ़केवस्त्रपरबहुतधनव्ययकरतेहैं।मस्न्दरतथा
सतं्संग-भवन के ननमााणके नलएदान-रूपमेंपयााप्तधनदीनजए।संसारके नलएयहआपकी
नवशेष देन होगी।

हर शहर और हर मोहल्ले में आपके दान से गीता भवन का ननमााण होना चानहए। यह
काया नकतनाआश्चयाजनकहोगा!सवात्रहीसतं्संगहोगाऔरउनसतं्संगों ़मेंलोगधानमाकनशक्षा
प्राप्त करेंगे।लोगों ़केजीवनमेंनदव्यपररवतानआयेगाऔरउसकेपररणामस्वरूपसारासमाजही
पररवनतात हो जायेगा। उदात्त नवचार और आदशा लोगों ़ के हृदय में घर कर जायेंगे। छल-कपट दूर
होगा। धमा का एकछत्र साम्राज्य होगा। सभी लोग 'सवाभूतनहते रताः' होंगें ; यह नवश्व एक ही
पररवार है, इस भावना से लोग सभी प्राणनयों ़ के कल्याण में संलग्न होंगें ।

नजस प्रकार समस्त नवश्व में एक ही सूया और एक ही चन्द्र प्रकाशमान् हैं, उसी प्रकार सभी प्रानणयों ंमें एक ही चेतना, एक ही आिा नवद्यमान है; परन्तु माया की शस्क्त से सभी नभन्न दीख पडते हैं। मेहतर और मोची आपकी ही आिा हैं। माया के कारण ही आप ऐसा सोचते हैं नक यह मनुष्य नीच है और वह उच्च। वेदान्त एकता की घोषणा करता है। सब एक ही हैं। यह सत्य आपके समस्त शरीर में रम जाना चानहए। यह सब सत्संग से ही सम्भव है।

इन उच्च आदशों का सतत श्रवण और मनन करना चानहए। कुछ वेदास्न्तक साधक कहते नफरते हैं नक 'तीनों ंकाल में कोई नवश्व नहीं ंहै'; नकन्तु यनद उनकी दाल में नमक कम हो अथवा दूध में चीनी कम िाली गयी हो, तो वे उत्तेनजत हो उठते हैं। इस मौस्खक वेदान्त से काम नहीं ंचलने का। आपको व्यावहाररक वेदान्ती बनना होगा और सतत सत्संग से ही आप व्यावहाररक वेदान्ती बन सकते हैं।

सत्संग से वास्तनवक जीवन के नसद्धान्त सीखें

आपको सत्संग से सचे्चे जीवन के नसद्धान्त को सीखना चानहए। परनहत जीवन ही सच्चा जीवन है। आप हीरे की अाँगूठी और बनारसी साडी से अपने को सुसस्ित करती हैं। क्ा हीरे की अाँगूठी और बनारसी साडी में सौन्दया है? सेवा-भाव और दानशीलता ही यथाथा हीरा है। आप सुन्दर वस्त्र धारण करके सैकडों ंबार शीशे में अपना मुख देखती हैं। क्ा इनसे आप रूपवती बन जाती हैं? सच्चा सौन्दया तो अन्दर है। आपके अन्तरतम में अनन्त सौन्दया का ननवास है :

"ज्योशतषामशि तज्ज्योशतस्तमसिः िरमुच्यते।
ज्ञानं जे्ञेयं ज्ञानगम्ंयं हृशद सवमस्य शवशितम्।।"

आप अपना सारा समय इस शरीर को अलंकृत करने में ही व्यतीत करते हैं। प्रातः दाढ़ी बनाते हैं। शाम को आप पुनः दाढ़ी बनाते हैं। इस प्रकार आप अपने अमूल्य समय और जीवन का अपव्यय करते हैं। आप सत्संग के समय का सदुपयोग करना सीखें।

सबसे पे्रम करें। सबको गले लगायें। सबके प्रनत सदय रहें। दनलत भाइयों ंकी सहायता करें। अपने नलए छह-सात कमीजें न रख कर एक कमीज नकसी गरीब को दे दें। इससे ही आपका नवकास होगा। इस भााँनत ही आप सबमें व्याप्त एक आिा का साक्षात्कार कर सकेंगे।

प्रते्येक व्यस्क्त में सद्गुण देखने का प्रयत्न करें। दोष-दृनष्ट का स्वभाव छोड दें। आपका कलुनषत मन, ननम्नकोनट का स्वभाव दूसरे व्यस्क्त के सद्गुणों ंकी उपेक्षा कर उसके केवल दोष ही देखता है। नववेक-दृनष्ट का नवकास करें। मानव-स्वभाव ही ऐसा है नक वह दूसरों ंके केवल दोष ही देखता है। नजनमें दोष नहीं ंहै, उनमें भी उन दोषों ंको आरोनपत कर बैठता है। सत्संग और स्वाध्याय से इस स्वभाव को दूर करना होगा। दूसरों ंमें केवल गुण ही देखने के स्वभाव का नवकास कीनजए। तभी आप सबके साथ नमल सकेंगे, सभी के गुणों ंको पहचान सकेंगे और आप नकसी के प्रनत घृणा नहीं ंकर सकेंगे। सत्संग िारा ही आप इस स्वभाव का नवकास कर सकते हैं।

व्यस्क्तगत और सामूनहक साधना

पााँच वषा के स्वाध्याय से आप नजतनी आध्यास्कि उन्ननत कर सकते हैं, वह केवल एक ही सतंसंग से प्राप्त हो सकती है। आप सबने इसका अनुभव भी नकया है। मैं आपको धोखा नहीं ंदे रहा हाँ। आप सभी इसका अनुभव कर रहे हैं : अपरोक्षानुभूनत। यहााँ संकीतान करते समय आपको बाह्य जगत् का स्मरण नहीं ंरहता है। आप क्ोंकर इस बाह्य जगत् को भूल जाते हैं; शरीर भाव से ऊपर उठ जाते हैं? इसका एकमात्र कारण है प्रभु का यह नाम-कीतान, यह सतंसंग ।

सतंसंग से ही आप जाग्रत रह सकते हैं। आप भाव-समानध में यहााँ ननमग्न हो जायेंगे। नकन्तु यनद आप अपने कमरे में नाम-जप का प्रयत्न करें, तो आप एक दूसरे ही प्रकार की समानध में प्रवेश करते हैं। वह है घोर ननिा। एक व्यस्क्त मन के ननयन्त्रण तथा नचत्तवृनत्तयों ंके उन्मूलन का सरलतम उपाय जानना चाहता था। उसके गुरु ने कहा- "चावल और खट्टा दही भर-पेट खा लो। मुलायम और सुखदायक नकसी अचे्छे नबस्तर पर लेट जाओ। नसर और पैर के नीचे मोटा तनकया रख लो। खूब आराम से लेटो। गहरा श्वास लो। इस भााँनत तुम मन से परे हो जाओगे।" यह है गहरी ननिा। यनद आप अपने कमरे में बैठ कर नाम-जप और ध्यान का प्रयत्न करें, तो आप भी इसी स्स्थनत को प्राप्त होंगें। सतंसंग में सस्िनलत होने पर आप ननरन्तर जाग्रत रहते हैं और आप समस्त उपस्स्थत व्यस्क्तयों ंके आध्यास्कि स्पन्दन से सहायता प्राप्त करते हैं।

४. गृहसथ और सतंसंग

यह संसार बडा ही रमणीय, मनमोहक और आकषाक प्रतीत होता है। स्वानदष्ट पेय, रसीले फल, सुगस्न्धत पुष्प, नमष्टान्न और टॉफी, चाय तथा कॉफी, सुन्दरी स्स्त्रयााँ और मनोहर उद्यान- ये सब मन को बलात् अपनी ओर आकनषात कर लेते हैं। नजसमें नववेक और वैराग्य नहीं ंहै, ऐसा मनुष्य सहज ही इनसे आकनषात हो जाता है। वह माया में ही ननवास करता है, सदा माया का ही नचन्तन करता है, नवषय-वसुतुओं ंकी ही सतत चचाा करता है और अशुभ वासनाओं ंसे आपूररत रहता है।

परन्तु एक क्षण के नलए इस संसार के वास्तनवक स्वरूप का नचन्तन तो कीनजए। इन रमणीय वसुतुओं ंके साथ ही जन्म, मृतुयु, जरा, व्यानध का चक्र अहननाश चालू है। सम्पनत्त का नाश, नप्रयजनों ंकी मृतुयु, अपमान और पराजय-इन्ें आप अपने जीवन में ननत्यप्रनत अनुभव करते हैं; नफर भी आप इन रमणीय पदाथों के पीछे यह सोच कर पडे रहते हैं नक इनसे आपको नवशुद्ध आनन्द की प्रास्प्त होगी, परनुतु बदले में आपको ननराशा ही हाथ लगती है। आप शोक-सागर में ननमग्न हो जाते हैं। आपने संसार का स्वरूप समझने में भूल की। यह संसार दु:ख, शोक और मृतुयु का आगार है। आपको इस संसार में इन नवषय-वसुतुओं ंसे सच्ची शास्न्त, सुख और आनन्द नहीं ंप्राप्त हो सकते। यनद ऐसी बात है, तो नफर आप उन्ें कहााँ प्राप्त कर सकेंगे ?

साधना और सत्संग से आि-साक्षात्कार

इस नामरूपािक जगत् के पीछे, इन अस्सथर नवषय-पदाथों के पीछे, इन नवनाशशील दृश्यों ंके पीछे सस्च्चदानन्द परब्रह्म है। स्वाध्याय, ध्यान, जप, कीतान और सत्संग के िारा आिानुभूनत प्राप्त करें। इससे आप वासना-जाल से, मन की दासता से तथा जन्म-मृत्यु की शृंखला से मुक्त होंगें।

अनवद्या, काम और कमा ने ही आपको जन्म-मृत्यु के चक्र में बाँध रखा है। आप अपने स्वरूप को भूल गये हैं। आपको अपने सस्च्चदानन्द-स्वरूप का पता नहीं ंहै और यही कारण है नक आप ऐसा सोचते हैं नक बाह्य नवषय-वस्तुओं ंमें ही सुख है। उनके नलए आपमें इच्छा जाग्रत होती है। आप उनको प्राप्त करने के नलए प्रयास करते हैं और पररणाम-स्वरूप कमा का उदय होता है। कमा से जन्म-मृत्यु का चक्र चलता है।

यनद आप आवागमन के चक्र से मुक्त होना चाहते हैं, तो अपने को अशुभ वासना से और अन्ततः अज्ञान से मुक्त बनाइए तथा नववेक, वैराग्य और मन के सनुतुलन का नवकास कीनजए। महनषा पतंजनल के अष्टांगयोग, देवनषा नारद के भस्क्तयोग, भगवान् शंकराचाया के ज्ञानयोग, भगवान् श्रीकृष्ण के कमायोग अथवा आधुननक युग के सवाथा अनुकूल समन्वययोग का अभ्यास कीनजए। आप तब आवागमन के चक्र से मुक्त हो जायेंगे। आप शाश्वत आनन्द प्राप्त करेंगे। यही जीवन का चरम उद्देश्य है। यही आपका धमा है। आपको मानव-जन्म इसनलए नमला है नक आप इस उद्देश्य को इसी जीवन में, यहाँ और अभी प्राप्त कर लें। यनद आप अपने लक्ष्य की प्रास्प्त के नलए प्रयत्नशील नहीं ंहैं, तो आप अपनी जीवन-रूपी इस अमूल्य भेंट की उपेक्षा कर रहे हैं।

सांसाररकता से सत्संग ही रक्षा करता है

अपना लक्ष्य न भूलें। अपने लक्ष्य की सूमृनत सतत बनाये रखने के नलए सत्संग परम आवश्यक है। सत्संग आपके हृदय में उत्कण्ठा की अनग्न को प्रदीप्त रखता है। आलस्य को दूर करने, वासना-जाल से बचाने तथा लक्ष्य के नवस्मरण से रक्षा करने के नलए वह ढाल है। सत्संग आपका सवोत्तम नमत्र, आपका आध्यास्िक पोषण है। सत्संग आपके माता-नपता से भी श्रेष्ठतर है; क्योंनक आपके माता-नपता ने तो आपको केवल यह भौनतक देह प्रदान की है, नकनुतु सत्संग तो आध्यास्िक आलोक प्रदान करता है। भगवत्-साक्षात्कार के नलए सत्संग ही मूलभूत साधन है। जहाँ सत्संग होता है, वहाँ महािा और सत्पुरुष जन एकत्र होते हैं। ये सन्त जन आपको सिसुतु का स्मरण नदलाते हैं, सांसाररक वसुतुओं ंकी कृनत्रम चकाचौंध से आपकी रक्षा करते हैं और दुलंघ्य संसार-सागर से आपको बचाते हैं। उनके भव्य आदशा आपको प्रेरणा देते हैं, उनके आि-उद्बोधक उपदेश आपका पथ-प्रदशान करते हैं। सत्संग से मनोननग्रह, धारणा तथा ध्यान की व्यावहाररक नशक्षा नमलती है।

अतः सत्संग सांसाररक कायों में संलग्न गृहसथों ंके नलए अपररहाया, त्याग-मागा के अनुगामी आध्यास्िक साधकों ंके नलए आवश्यक तथा प्रौढ़ योनगयों ंऔर वेदास्न्तयों ंके नलए भी अतीव लाभदायक है। यह सत्संग गृहसथों ंमें आध्यास्िक जागरण लाता, आध्यास्िक साधकों ंको प्रेरणा

देता और प्रौढ़ योनगयों ◌ं के उत्साह को बनाये रखता है। सतुपुरुषों ◌ं और महिाओं ◌ं के नलए तो सत्संग आनन्द, प्रसन्नता और लोक-संग्रह में हेतु है। महिागण अपनी आध्यास्कि अनुभूनतयों ◌ं को संघषारत जिाओं ◌ं को दे कर संसार-बन्धन में पडे हुए प्रानणयों ◌ं का उद्धार करना चाहते हैं। वे लोग सत्संग के प्राण हैं। सत्संग का उदे्देश्य ही इन महिाओं ◌ं की संगनत से आनन्द प्राप्त करना है।

सच्चा सत्संग-भवन आपके हृदय में

सत्संग-भवन तो वास्तव में वैकुण्ठ, कैलास अथवा परम-धाम है। सच्चा सत्संग-भवन तो आपके हृदय में ही है। वहाँ ही सत्, नचत्, आनन्द अथवा ब्रह्म का ननवास है। यम, ननयम, आसन और प्राणायाम के अभ्यास िारा मन का ननयन्त्रण कीनजए। प्रत्याहार और धारणा के अभ्यास
िारा मन को एकाग्र कीनजए, तब अपने हृदय में ही ननवास करने वाले जिा पर ध्यान कीनजए।
जिा-नवश्लेषण, अन्तरावलोकन तथा जिा-नजज्ञासा के िारा आप अपने सत्संग भवन में ननत्य प्रवेश कर सकते हैं। इससे जिा-साक्षात्कार होगा और आप सदा-सवादा के नलए उस सत् से
तादात्म्य प्राप्त करेंगे।

यही आपका लक्ष्य है। इस लक्ष्य को भूनलए नहीं।◌ं माया बहुत प्रबल है। आपकी सभी
सनदच्छाओं ◌ं के होते हुए भी आप अपने इस परम कताव्य को भूल जायेंगे। अतः सत्संग-भवन में
आइए और सन्तों ◌ं तथा योनगयों ◌ं के साथ सम्पका कीनजए। वे आपको मन के ननयन्त्रण की, प्राणायाम
और ब्रह्म-नवचार के अभ्यास की, नवषय-पदार्थों से मन को नवयुक्त करने की तथा मन को
सास्त्वक नवचारों ◌ं से आपूररत करने की नवनध बतलायेंगे।

शरीर तथा मन के साथ तादात्म्य होना ही सारे दुःखों ◌ं का मूल है। वास्तव में आप सस्च्चदानन्द-
स्वरूप हैं। इस स्वरूप में स्सथत होना ही शाश्वत शास्न्त और परमानन्द की कुंजी है। **"अजो शनत्यिः
िाश्वतोऽयं िुराणो"** - यह जिा अजन्मा, ननत्य, शाश्वत और पुरातन है। अपने ध्यान, जप,
कीतान और प्राथाना में ननयनमत रनहए। लोग कुछ समय तक संकीतान करते हैं, सत्संग में सस्निलत
होते हैं, नफर उसे छोड देते हैं। यह एक दुःखद भूल है। साधना में ननयनमतता अतीव महत्त्वपूणा
है। जो कुछ भी आप करते हैं, उसे ननयनमत रूप से करें। ध्यान के समय को धीरे-धीरे बढ़ाइए।
इस संसार की कृनत्रम चकाचौंध के नमथ्या प्रलोभनों ◌ं से आकनषात न हों।◌ं भौनतक सम्पनत्त से नकसी
को लाभ नहीं ◌ं पहुँचा है। आपके पास करोडों ◌ं रुपये बैंक में हो सकते हैं, सैकडों ◌ं मोटरगानडयाँ और
दरजनों ◌ं मकान हो सकते हैं; परनु्तु आप इनसे माननसक शास्न्त नहीं ◌ं प्राप्त कर सकते। माननसक
शास्न्त तो ननयनमत जप, ध्यान, कीतान और सत्संग से ही नमल सकती है। जिा-साक्षात्कार के
अनन्तर ही आप शाश्वत शास्न्त का आनन्द ले सकते हैं। ननयनमत और सुव्यवस्सथत आध्यास्कि
साधना के िारा अपने हृदय में ही सत्संग भवन का ननमााण कीनजए तथा भगवत्-साक्षात्कार प्राप्त
कीनजए-सुदूर भनवष्य में नहीं,◌ं अभी इसी क्षण ही। इस लक्ष्य को न भूनलए।

यहाँ मैं आपको उपननषद् के महावाक् की याद नदलाता हाँ; **"तत्त्वमशस"**-तू ही अनन्त,
अनवनाशी सस्च्चदानन्द ब्रह्म है। नाम-स्मरण की धारा सतत बनाये रखें। काया करते समय भी मन-
ही-मन 'श्रीराम' का जप कीनजए। श्रीराम भगवान् के अवतार तथा नशव के सखा ही नहीं ◌ं हैं,
वरन् वही सवाव्यापक, सवाज्ञ और सवाशस्क्तमान् परब्रह्म हैं। सदा श्रीराम का ध्यान कीनजए। भले

बनें। सुकमा करें। भि बनें। उदार बनें। सतसंग, स्वाध्याय , जप, कीतान तथा ध्यान ि◌ारा आि-साक्षात्कार प्राप्त करें। भगवान् आप सबका कल्याण करें !

५. महिाा कौन है?

महिाा को पहचानना अत्यन्त कनठन है। कानलदास ही कानलदास को समझ सकता है। बुद्ध ही बुद्ध को समझ सकता है। नचरकाल तक सतसंग करने वाला अनुभवी व्यस्क्त ही इस नवषय में नकसी ननननश्चत ननष्कषा तक पहुाँच सकता है; नफर भी यह आवश्यक नहीं ◌ं है नक उसका यह ननष्कषा ठीक ही हो। नदव्य दृनष्ट से सम्पन्न एक ज्ञानी ही ज्ञानी को प्रत्यक्ष देख और समझ सकता है।

एक साधु नग्न (नदगम्बर) रहता है। वह अनंकंचन है, 'करतल नभक्षा तरुतल वास:' की उस्क्त चररताथा करता है और वन में ननवास करता है; परन्तु हो सकता है नक वह सबसे बडा दम्भी हो, वह बाह्य एवं आन्तररक वासनाओं ◌ं तथा सभी प्रकार की कामुक भावनाओं ◌ं से पूणा एक बहुत बडा सांसाररक व्यस्क्त हो। गााँजा और भााँग के नमलने पर वह खुशी से नाच उठता हो। उसका मन ननराशा और अशास्न्त से पूणा हो। इसके नवपरीत एक व्यस्क्त व्यस्त नगर में रहता है और एक बडे बाबू का-सा जीवन-यापन करता है। वह शानदार वस्त्र पहनता और स्वानदष्ट भोजन करता है; नफर भी उसमें नकसी वस्तु के प्रनत नंकंनचन्मात्र भी राग नहीं ◌ं है। श्री रामानुज भोग-नवलास के मध्य ही रहते थे। उन्ोंनें भोगमय जीवन का ही प्रचार नकया। राजा जनक राजकीय आनन्द लूटते थे; नकन्तु नफर भी उनका कहना था : "मेरी सम्पनत्त अपार है; पर मेरे पास कुछ नहीं ◌ं है। यनद समूपूणा नमनथला जल कर भस्म हो जाये, तब भी मेरी कुछ हानन नहीं।◌ं"

महिााओं ◌ं की पहचान में भूल

साधु के नवषय में ननणाय करने में गृहसथजन प्रायः भूल कर बैठते हैं; क्ोंनंक ऐसा करने में वे साधु के बाह्य रूप पर ही नवचार करते हैं। साधारण गृहसथ की तो कौन कहे, इस सम्बन्ध में नशनक्षत समुदाय भी प्रायः भूल करता है। हमारे नवश्वनवद्यालय की वतामान नशक्षा से साधु-महिााओं ◌ं की आध्यास्कि प्रगनत के ननणाय में सहायता नहीं ◌ं नमल सकती। आध्यास्कि मागा सवाथा नभन्न है।

एक बार उत्तरकाशी में स्वामी देवनगरर जी महाराज योगवानसष् पर प्रवचन कर रहे थे। वहााँ एक युवक साधु ने ज्ञानी की सातवीं ◌ं भूनमका का वणान सुना। उसने तत्काल तुरीय अवसथा में होने का बहाना नकया। भोजन करना छोड नदया। अपने कमरे में ही मल-मूत्र का त्याग करने लगा। पन्दरह नदनों ◌ं तक यह स्सथनत बनी रही। साथ वालों ◌ं के कारण पूछने पर उसने बताया नक वह ज्ञान की सप्तम भूनमका में है। एक बुस्द्धमान् व्यस्क्त ने उसकी माननसक स्सथनत की जााँच करने के नवचार से उसके शरीर से 'नबचूछू-कााँटा' पौधे की पनत्तयों ◌ं का स्पशा कराया। इससे उसके शरीर में नबचुछु-दंश-जैसी जलन होने लगी। वह जोर-जोर से चीत्कार करने लगा। उसने अपनी भूल स्वीकार की और सदा की भााँनत भोजन करने लगा। आज-कल पंजाब, ऋनषकेश तथा अन्यान्य सथानों ◌ं में ऐसे ज्ञानी बहुत पाये जाते हैं। ऐसे ज्ञाननयों ◌ं से सावधान रहने की आवश्यकता है। ऐसे ज्ञाननयों ◌ं की

माननसक स्सथनत की परख जलती हुई लकडी उनके शरीर से स्पशा करा कर बडी सरलता से की जा सकती है।

एक-दो घणे्टे की सामान्य बातचीत से ही नकसी साधु की आध्यास्कि प्रगनत का अनुमान नहीं ंलगाया जा सकता। सही मूल्यांकन के नलए उनके सानन्नध्य में बहुत नदनों ंतक रहने की आवश्यकता होती है। ऐसे नसद्ध पुरुषों ंके उदाहरण पाये जाते हैं नजनके पास हाथी, घोडे तथा सभी राजकीय वैभव के होते हुए भी वे अपनी इन भौनतक वसुतुओं ंसे नंकंनचन्मात्र भी आसक्त नहीं ं थे। सांसाररक कायों में व्यस्त रहते हुए भी उनमें सदा ज्ञान-ननष्ा और स्वरूप-स्सथनत बनी रहती थी। यही पूणा नवकास है। यही भगवद्गीता का सार-तत्त्व है। यही भगवान् श्रीकृष्ण की प्रमुख नशक्षा है।

आवश्यकता है माननसक नग्नता की। राग, िेष, अहंकार आनद को दूर कर मन का मुण्डन कीनजए। नफर आप जहााँ चाहे वहााँ रह सकते हैं। नगर आपके नलए घोर जंगल के समान ही होगा। इसके नवपरीत यनद आपका मन कामुक नवचारों ंसे अशान्त है, आपकी इस्न्द्रयााँ उपिवी हैं, तो सघन वन भी आपके नलए व्यस्त नगर-सा ही है। ज्ञान एक माननसक स्सथनत है। आप आि-साक्षात्कार करना चाहते हैं। बाह्य नचह्न कोई नननश्चत मापदण्ड नहीं ंहै। अतः साधु के बाह्य लक्षणों ंकी ओर ध्यान न दीनजए। व्यस्क्त नकसी प्रकार का भी भोजन कर सकता है। वह नकसी तरह का भी वस्त्र पहन सकता है। वह अपने केशों ंको अपने सुनवधानुसार साँवार सकता है। यह सब अनावश्यक बातें हैं। सदा उसकी आन्तररक माननसक स्सथनत को देस्खए।

सचे्चे धमा का प्रारम्भ कहााँ से होता है?

एक भक्त, संन्यासी अथवा योगी अपने इच्छानुसार जो चाहे खा सकता है, जैसा वस्त्र चाहे धारण कर सकता है और अपने मनोनुकूल केशों ंको साँवार सकता है। वह अपने प्रारब्धानुसार फल, सूखे पते्ते, जल अथवा उत्तम भोजन पर अपना ननवााह कर सकता है। वह नंगा रह सकता है अथवा बहुमूल्य वस्त्र पहन सकता है। वह महान् नतनतकुषु या तपस्वी हो सकता है। इन वसुतुओं ंसे सचे्चे धमा का कोई सम्बन्ध नहीं ंहै।

जब मनुष्य शरीर-चेतना से ऊपर उठ जाता है, तभी सचे्चे धमा का प्रारम्भ होता है। जब मनुष्य कुषि प्रथाओं,ं प्रचलनों ंऔर मान्यताओं ंसे ऊपर उठ जाता है, तभी सचे्चे धमा का प्रारम्भ होता है। जो शरीर-चेतना में ही हैं, ये ननरथाक सामानजक बन्धन उनके नलए ही हैं। नजसने अपने को नवकनसत कर नलया है, उसके नलए इन बातों ंका कोई मूल्य नहीं ंहै। सच्चा साधु-संन्यासी इन बातों ंसे ऊपर होता है। यथाथा रूप से नवकनसत व्यस्क्त से यह आशा नहीं ंकी जा सकती नक वह इन प्रारस्म्भक सामानजक अथवा धानमाक बन्धनों ंका दास बने। सांसाररक मनोवृनत्त वाले लोग आहार और वेशभूषा पर अनधक बल देते हैं और इसी कारण वे सचे्चे संन्यासी के गुणों ंको नहीं ंपहचान सकते। वे उनका बाह्य रूप ही देखते हैं और धोखा खाते हैं। उनके पीछे व्यथा ही पडे रहते हैं। वे अकारण ही ईष्याा करते हैं। वे सतं्संग से नवशेष लाभ नहीं ंउठा पाते और प्राप्त सुअवसर को यों ं ही खो बैठते हैं। वे छोटी-छोटी बातों ंको ले कर दोष ननकालते हैं। वे कहते हैं, "वह संन्यासी तो प्याज खाता है, यह साधु तम्बाकू पीता है, वह महािा तो दाढ़ी बनवाता है।" यनद आप इन छोटी-छोटी बातों ंकी ओर ध्यान देंगे, तो आपको कोई लाभ नहीं ंहोगा। बदावान के एक नतब्बती

बाबा महान् योगी हैं। वे तम्बाकू पीते तथा मांसाहार भी करते हैं। परन्तु इससे क्या? उन्हें तामनसक भोजन को सास्त्वक भोजन में रूपान्तररत करने की नवनध जो मालूम है।

आध्यास्त्मकता का मापदण्ड नसस्द्धि नहीं ं

इस सम्बन्ध में दूसरी भारी भूल जो लोग प्रायः करते हैं, वह यह है नक लोग प्रदनशात नसस्द्धियों ंसे ही साधु की महानता का ननणाय करते हैं। साधारणत: आज के जगत् में नसस्द्धियों ंसे ही साधु की योग्यता और नवशेषता को पहचाना जाता है। ननश्चय ही यह एक महान् भूल है। उन्हें इस प्रकार साधु की महानता का ननणाय नहीं ंकरना चानहए। नसस्द्धियााँ तो धारणा-शस्क्त की उपज हैं। आि-साक्षात्कार से नसस्द्धियों ंका कुछ भी सम्बन्ध नहीं ंहै। कोई साधु उग्र वासना और तीव्र इच्छा से नसस्द्धियों ंका प्रदशान कर सकता है और यनद बात ऐसी है, तो वह ननस्सन्देह एक बडा गृहसथ है। नवश्वास कीनजए नक नसस्द्धियााँ आध्यास्त्मक प्रगनत में बहुत बडी बाधा हैं तथा जब तक व्यस्क्त नसस्द्धियों ंके क्षेत्र में ही रमण करता है और उससे ऊपर उठने का प्रयास नहीं ंकरता है, तब तक उसके नलए भगवत्-साक्षात्कार की नंकंनचन्मात्र भी आशा नहीं ंहै। परन्तु इसका यह भी अथा नहीं ंनक नसस्द्धियों ंका प्रदशान करने वाले व्यस्क्त को आि-साक्षात्कार प्राप्त नहीं ंहुआ है। ऐसे 'कई उदाहरण पाये जाते हैं जब ऐसे व्यस्क्तयों ंने नवश्व के उत्थान के नलए कई नसस्द्धियााँ नदखायीं;ं पर स्वाथावश उन्होंने कभी भी ऐसा नहीं ंनकया।

श्रीरामकृष्ण परमहंस के समय में एक साधु उनके पास आया और दो नसस्द्धियााँ नदखायीं।ं एक तो यह थी नक वह लोगों ंकी दृनष्ट से ओझल रह कर कहीं ंभी नवचरण कर सकता था। दूसरी यह थी नक जब वह चलता था, तो उसके गुदा-द्वार से ज्योनत ननकला करती थी। कुछ समय पश्चात् उस व्यस्क्त ने एक मनहला के कमरे में प्रवेश नकया। वह मनहला उसे देख न सकी। उसने अपनी नसस्द्धियों ंका दुरुपयोग नकया। उस मनहला के साथ उसका प्रेम हो गया। उसकी दोनों ं नसस्द्धियााँ जाती रहीं।ं आधुननक जगत् के सामान्य लोग और नशनक्षत जन भी केवल नसस्द्धियों ंसे ही साधु की पहचान करते हैं। यह भयंकर भूल है; अतः मैं आपको सचेत कर रहा हाँ।

धमाग्रन्थों ंको रट लेना योग नहीं ं

शास्त्रों ंके उद्धरण देना व्यस्क्त के आध्यास्त्मक नवकास का पररचायक नहीं ंहै। एक व्यस्क्त सारे वेदों,ं उपननषदों ंतथा ब्रह्मसूत्र को कण्ठाग्र कर सकता है, नफर भी यह सम्भव है नक वह अतीव नीच हो। आजकल ऐसे बहुत से लोग हैं जो कुछ ग्रन्थों ंका थोडा अध्ययन कर अपने को बडा योगी, ज्ञानी या जीवन्मुक्त होने का दम्भ भरते हैं। योग के केवल सैद्धास्न्तक ज्ञान से उसके फल का आनन्द नहीं ंनमल सकता। केवल बौस्द्धक कुतूहल, उत्साह और आवेश से योगाभ्यास में रंचमात्र भी सहायता नहीं ंनमल सकती। योगदशान के कुछ सूत्रों ंको pi कर यह नदखाना नक 'मैं योगी हाँ', दम्भ के अनतररक्त कुछ नहीं ंहै। योगाभ्यास कोई व्यवसाय नहीं ंहै। नकसी यौनगक नक्रया का नमथ्या प्रदशान कर भगवान् को, अपने को तथा जनता को धोखा देना भयंकर अपराध है। इस अक्षम्य अपराध का कोई प्रायनश्चत्त नहीं ंहै। इसके नलए सवाानधक दण्ड अपेनक्षत है।

नतनतक्षा मात्र से कोई तपस्वी नहीं ंबनता

कई लोग ऐसे हैं जो साधु-संन्यासी के वेष में हठयौनगक नक्रयाओं ंकी अनधक चचाा करते हैं और समानध लगाने का दम्भ भर इधर-उधर घूमते-नफरते हैं। कोई तो केवल हवा और पानी पर रह सकता है, कोई पृथ्वी के नीचे छह मास तक रह सकता है और कोई तो नाइनटरक एनसि, काँच के टुकडे और नवष ननगल सकता है। ये सब तो केवल शारीररक प्रनशक्षण हैं, साधु के वास्तनवक गुण नहीं।ं

मन में अनुकरण की क्षमता है। स्वामी कृष्णाश्रम-जैसे महान् सन्त गंगोत्तरी में बहुत कठोर जीवन व्यतीत करते हैं। बहुत से लोग उनका अनुकरण करने का प्रयत्न करते हैं और अपने को महिाा या नसद्ध पुरुष मानते हैं। कुछ नवयुवक नववेकचूिामनण और अवधूतगीता पढ़ कर, अपने अन्दर नबना आन्तररक पररणनत लाये ही अवधूत बनने का ढोंग करते हैं। काम, क्रोध, राग, िेष तो उनके मन में पूवावत् ही बने रहते हैं। अज्ञानी गृहसथजन इन बाह्य रूपों ंसे छले जाते हैं। नतनतक्षा मात्र ही आध्यास्किता का लक्षण नहीं ंहै। सीतापुर के मुन्शी श्री प्रद्युम्न केशव ने एक साधु का उदाहरण देते हुए मुझे बताया था नक वह भीषण गरमी में तप्त बालुका पर घण्टों ंलेट सकता था, नफर भी बडे आवेश के साथ छोटी-छोटी वसुतुओं ंके नलए लड पडता था। ये सब केवल शारीररक प्रनशक्षण हैं। नतनतक्षा तो माननसक गुण है। वैराग्य भी माननसक स्सथनत है। संन्यास भी माननसक ही होता है। दृढ़ इच्छा-शस्क्त वाला मनुष्य एक क्षण में अपने सभी वस्त्र त्याग सकता है और नबना प्रारस्म्भक नशक्षण या कष्ट के गंगोत्तरी में शीतकाल में वस्त्रहीन ही रह सकता है।

यनद नतनतक्षा से ही मोक्ष नमले तब तो मछनलयाँ, जो चौबीसों ंघण्टे जल में रहती हैं, मोक्ष पा सकती हैं। यनद केवल नशर मुँिाने से मुस्क्त नमलती हो तो भेड-बकररयाँ, नजनके बाल काटे जाते हैं, मुक्त हो जाते। यनद नाली में पडे हुए रोटी के टुकडे खाने और गोबर के ढेर पर सोने से मोक्ष नमलता हो, तब तो कुत्ते भी मोक्ष के पात्र हैं। कहने का तात्पया यह है नक नकसी व्यस्क्त के नवषय में उसके बाह्य रूप को ही देख कर ननणाय न करें, वरन् उसकी आन्तररक माननसक स्सथनत को भी देखें।

तब सच्चा महिाा कौन है ?

न तो केवल जटा रखने से, जोरदार भाषण देने से या नवित्ता या चमत्कार के प्रदशान से ही कोई व्यस्क्त पूणाता या ज्ञान प्राप्त कर सकता है। नजसमें राग, िेष, अहंकार, काम, क्रोध आनद की ऊनमायाँ समूल नष्ट हो चुकी हैं, केवल वही व्यस्क्त सदा सुखी और जीवनुमुक्त है।

सचे्चे सन्त तो वे हैं नजनका मन शान्त है, जो लोभ से मुक्त हैं, नजन्ोंनें वासना पर नवजय पा ली है, अपनी इस्न्द्रयों ंऔर अन्तःकरण को ननयस्न्त्रत कर नलया है, जो भगवद्भक्त हैं, नन:सूपृह हैं, सुख-दु:ख में समभाव रहते हैं, ननरासक्त हैं, नजनमें आि-संयम के गुण हैं और जो-कुछ नमल जाता है, उससे ही सनुतुष्ट रहते हैं।

नजस व्यस्क्त में आप दया और नवनम्रता पायें, उसे ही साधु समझें। साधु का हृदय दूसरों ं के कष्ट से िनवत हो जाता है। मानव-हृदय पापों ंसे बडा कठोर बन गया है। जब वह िनवत होने

लगता है, तभी भगवान् का वहाँ प्राकट्य होता है। साधु को 'पंचदशी' पर भाषण देने की आवश्यकता नहीं ंहै। उसमें गीता पर प्रभावशाली प्रवचन देने की क्षमता होना आवश्यक नहीं ंहै। भले ही वह ब्रह्मसूत्र के एक ही वाक् पर तीन घण्ेटे तक टीका करने में समथा न हो; परन्ुतु उसके शरीर से एक मधुर सुगन्ध ननकलती रहती है, नजससे आप उसकी ओर आकनषात हो जाते हैं। जब आप उसके पास जाते हैं, तब आपको शास्न्त और आन्तररक आनन्द प्राप्त होता है। उसके साननध्य में आपकी समस्त नचन्ताएँ और व्यग्रताएँ नवलीन हो जाती हैं। उसके दृनष्ट-ननक्ेषेप से ही आप उन्नत होते हैं। उसका प्रत्ेयेक शब्द आपको प्ेरेरणा प्रदान करता है और आपके हृदय-पटल पर अंनकत हो जाता है। आपका स्वभाव पररवनतात हो जाता है और आपके जीवन में एक नये अध्याय का शुभारम्भ होता है। साधु की शस्क्त इतनी महान् होती है। सच्ची दया और नवनम्रता की ऐसी ही मनहमा है।

सतं्संग-प्रास्प्त की समस्या

आजकल गृहसथों ंकी यह नशकायत है नक अच्ेछे महािाओं ंका अभाव है। यह तो केवल बहानेबाजी है। साधु-संगनत का प्रश्न तो माँग-पूनता का प्रश्न है। यनद माँग सच्ची है, तो पूनता भी तत्काल होगी ही। यह प्रकृनत का अकाट्य ननयम है। यनद आप सच्ेचे नपपासु हैं, तो आपका गुरु आपके िार पर ही नमलेगा। आप तो मनमौजी जीवन व्यतीत करते हैं, आपका मन कामुकता और अपनवत्र वासनाओं ंसे भरा हुआ है। उच्चतर नदव्य जीवन व्यतीत करने की आपको रंचमात्र भी नचन्ता नहीं ंहै। व्यथा की बातों ंमें, सांसाररक चचाा में आप अपना बहुमूल्य समय नष्ट करते हैं। आप काम, लोभ, नाम और कीनता के दास बने हुए हैं। नफर भी आपकी यह नशकायत है नक मुझे अच्छा सतं्संग नहीं ंनमलता है। पहले अपने को दोष दीनजए। अपनी भूल स्वीकार कीनजए। इसके नलए प्रायनश्चत्त कीनजए। उपवास कीनजए। प्राथाना कीनजए। एकान्त में कातर हो कर रुदन कीनजए। सवाप्रथम अपने को योग्य अनधकारी बनाइए। तदनन्तर मेरे पास आइए। मैं आपको ऐसे पनवत्र आिा के पाद-पद्म में पहुाँचा दूाँगा जो आपको सन्मागा बतलायेंगे, ननदेश करेंगे तथा आध्यास्कि उन्ननत के नशखर पर ले जायेंगे। ये महामानव अनधकारी साधकों ंकी सदा खोज में रहते हैं। महािा तो प्रचुर संख्या में पाये जाते हैं। अभाव तो उपयुक्त साधकों ंका ही है। यनद आपकी यह नशकायत है नक सच्ेचे महािा नहीं ंहैं, तो महािाओं ंकी भी यह नशकायत है नक आजकल सच्ेचे सत्यान्ेवेषी नहीं ंहैं।

वास्तव में संसार में अच्छी वसुतुओं ंका सदा ही अभाव रहता है। कसूतूरी, केसर, रेनियम, चन्दन, नविान्, पुण्यिाा, शूरवीर तथा परोपकारी व्यस्क्त नवरले ही होते हैं। जब इनके सम्बन्ध में ऐसी बात है तो सन्त, योगी, ज्ञानी और भक्तों ंके नवषय में क्ा कहना ! अपने को महािाओं ं के संग का योग्य अनधकारी बनाने के नलए आपको आि-संयम, ब्रह्मचया, माननसक सथैया, मुमुक्ुषुता, नवनम्रता, आज्ञाकाररता, सेवा-भावना आनद आवश्यक गुणों ंसे सम्पन्न बनाना होगा। यनद आपको उनकी संगनत प्राप्त हो गयी, तो समझ लीनजए नक आपकी मोक्ष की समस्या हल हो गयी।

संन्यानसयों ंके प्रनत व्यवहार

अनधकांश गृहसथों ंकी साधुओं ंमें श्रद्धा नहीं ंहै और यनद संयोगवश उन्हें कोई अच्छा साधु
नमल भी जाये, तो वे उसके बाह्य रूप को देख कर दोष ननकालते हैं और उससे अनेक प्रश्न पूछते हैं जैसे गृहसथाश्रम का नाम, जानत, सम्प्रदाय, योग्यता, सम्बन्ध, आयु आनद। वे संन्यास के
प्रारस्म्भक नसद्धान्तों ंको ही भूल जाते हैं। वे कभी यह सोचते ही नहीं ंनक संन्यासी बनने के पश्चात् उसे ये सब चीजें भुला देनी पडती हैं; इतना ही क्ों, उसे तो अपनी शरीर-चेतना भी नवस्मररत कर देनी होती है। वे यह नहीं ंसमझते नक संन्यासी होने पर वह ब्राह्मण, साधु, प्राध्यापक अथवा नकसी नवशेष समाज, सम्प्रदाय और वगा का प्रनतननध नहीं रहा।

गृहसथों ंको साधुओं ंसे ऐसे प्रश्न नहीं ंकरने चानहए। शंका-समाधान की दृनष्ट से दाशाननक
नवषयों ंपर ही बातचीत करनी चानहए। तभी वे सत्संग से लाभ उठा सकेंगे। सांसाररक लोगों ंके मन
को बदलने तथा उसे अध्याि-पथ की ओर उन्मुख करने और पुराने दूनषत संस्कारों ंका पररष्कार
करने के नलए सत्संग ही सरलतम और िुतगामी मागा है। साधुओं ंकी संगनत में रनहए। उनकी
संगनतमात्र आध्यास्िक नशक्षा है।

सन्त के पास बडी ही नवनम्रता और श्रद्धा से जाना चानहए। यनद आप नवनम्र भाव से
उनकी सेवा में जायेंगे, तो वे ननश्चय ही आपको आध्यास्िक ज्ञान प्रदान करेंगे।

गृहसथों ंको चानहए नक सच्ची भस्क्त से निग्ध हो हाथ में फल-फूल ले कर संन्यानसयों ंके
पास जायें। जब भी संन्यासी के दशान हों, बडे भाव और प्रेम के साथ साष्टांग नमस्कार करना
चानहए। संन्यानसयों ंके सुिख सांसाररक बातें नहीं ंकरनी चानहए। यनद उन्हें संन्यानसयों ंसे कोई
शंका-समाधान करना हो, तो उन्हें अपना प्रश्न प्रसुतुत करना चानहए और सदा यह भी ध्यान रखना
चानहए नक प्रश्न आध्यास्िक और ईश्वर-सम्बन्धी हो। जब गृहसथ नकसी संन्यासी के आश्रम या कुटीर
में प्रवेश करें, तो केवल मजाक के नलए उन्हें अनाप-शनाप प्रश्न नहीं ंगढ़ने चानहए। संन्यानसयों ंका
अनधक समय बरबाद नहीं ंकरना चानहए। अपने सामथ्या के अनुसार गृहसथ को थोडी भेंट ले जानी
चानहए। संन्यासी तो इस धरा पर साक्षात् देव हैं। संन्यानसयों ंकी सेवा से बढ़ कर कोई भी यज्ञ
अथवा सेवा नहीं ंहै। यह सवाानधक पावनकारी है। वे धन्य हैं जो संन्यानसयों ंकी सेवा करते हैं,
क्ोंनक वे शीघ्र ही माननसक शास्न्त और हृदय की पनवत्रता प्राप्त करेंगे।

६. कुसंगनत के हाननकर प्रभाव

कुसंग के भयंकर दुष्पररणाम होते हैं। साधकों ंको सभी प्रकार के कुसंग का पररत्याग करना चानहए। बुरे सानथयों ंके सम्पका से मन दूनषत नवचारों ंसे पूणा हो जाता है। भगवान् और शास्त्रों ंमें रही-सही श्रद्धा भी जाती रहती है। 'संगनत से ही मनुष्य की पहचान होती है'; 'चोर
का भाई नगरहकट' - ये सब कहावतें नबलकुल सच हैं। नजस प्रकार नये उपवन की गाय आनद से रक्षा करने के नलए प्रारम्भ में अच्छी प्रकार से बाड आनद लगानी पडती है, उसी प्रकार नये
साधकों ंको बाहरी दूनषत प्रभाव से अपना बचाव बडी सतकाता से करना चानहए, नहीं ंतो उनका सवानाश नननश्चत है। असत्यवादी, व्यनभचारी, चोर, ठग, कपटी, बकवादी, चुगलखोर और नास्स्तकों ंकी संगनत से सवाथा बचना चानहए। स्त्रियों ंऔर लम्पटों ंकी संगनत भी नवपदकारी है।

नवल्वमंगल एक बार नचन्तामनण का नाच देखने गये। उनका समूपूणा अन्तःकरण नवषाक्त हो गया। वे एक धानमाक ब्राह्मण के गुणवान् पुत्र थे। उसके सभी पनवत्र नवचार जाते रहे। वे उसके प्रेम-पाश में फाँस गये और अपना जीवन नष्ट कर ि ाला। इस प्रकार के हजारों ंउदाहरण हैं। आन्ध्र प्रदेश के वेमन्ना भी आरम्भ में कुसंगनत के कारण पनतत हो गये थे। कुसंग से बढ़ कर खतरनाक अन्य कोई वस्तु नहीं ंहै। यनद अपनी पत्नी में भी धानमाक प्रवृनत्त नहीं ंहै और उसके नवचार सांसाररक हैं, तो उसका संग भी कुसंग ही है। इसी कारण धानमाक ग्रन्थ गंगा-तट तथा नहमालय के ननजान सथानों ंकी इतनी मनहमा गाते हैं।

कुसंग क्ा है ?

बुरा पररपाश्वा, नग्न नचत्र, अश्लील गीत, प्रेम-कथानक के उपन्यास, नसनेमा, नाटक,
पशुओं ंको मैथुन करते हुए देखना, कुनवचारजनक शब्द-संक्षेप में कहें, तो नजस नकसी बात से मन में दूनषत नवचार उत्पन्न होते हैं, वह कुसंग ही है। नजनसे मन में कुवृनत्त और बुरे नवचारों ंका
जन्म हो, उन्हें कुसंग ही समझना चानहए। कुसंग सतसंग का नवपरीताथी है नजसका अथा होता है 'बुरी संगनत'।

सथान, आहार, जल, पररवार, पडोस, दृश्य, सानहत्य, आलोचना, आजीनवका तथा उपासना-पद्धनत-ये दश सवाानधक महत्त्वपूणा नवषय हैं जो अपनी प्रकृनत के अनुसार हमें सतसंग या कुसंग की ओर ले जाते हैं।

साधक प्रायः नशकायत करते हैं: "हम तो गत पन्दरह वषों से साधना कर रहे हैं, नकन्तु कोई ठोस आध्यास्त्मक प्रगनत नहीं ंहुई।" इसका स्पष्ट उत्तर यह है नक उन्होंने पूणारूपेण कुसंग का पररत्याग नहीं ंनकया है। समाचार-पत्रों ंमें सभी प्रकार के सांसाररक नवषयों ंकी चचाा रहती है। साधकों ंको समाचार-पत्र नबलकुल नहीं ंपढ़ने चानहए। समाचार-पत्र पढ़ने से सांसाररक संस्कार उनदत होते हैं, मन में संवेदनाक क्षोभ उत्पन्न होता है, मन बनहमुाखी बनता है, 'संसार ठोस सत्य है', ऐसा भ्रान्त नवचार पैदा होता है और नाम-रूपाक जगत् से परे जो सत्य है, उसका नवस्मरण होता है।

कपटी नमत्र

यनद आप दश मन दूध में एक तोला नफटनकरी िाल दें, तो सारा दूध पीने के योग्य नहीं ं रह जायेगा। इसी प्रकार एक क्षण का कुसंग भी दश वषा के सत्संग के सप्रभाव को नष्ट कर िालता है। कुसंग भस्त का शत्रु है। कुसंग का पररत्याग कर सत्संग का सेवन कीनजए।

आपके कपटी नमत्र ही आपके वास्तनवक शत्रु हैं। इस संसार में एक भी ननसस्वाथा नमत्र आपको नहीं ंनमल सकता। सदा सावधान रनहए। नमत्रगण आपके पास आ कर व्यथा की बातें बनाते हैं और आपका बहुमूल्य समय यों ंही नष्ट करते हैं। वे आपको नीचे घसीटना और सांसाररक बनाना चाहते हैं। ऐसे नमत्रों ंकी पुस्ष्पत वाणी के भुलावे में न आइए। ऐसे नमत्रों ंसे कठोरता से सम्बन्ध-नवच्छेद कर दीनजए। सदा एकाकी रनहए। उन अमर नमत्र में (परम प्रभु में) नवश्वास रस्खए जो आपके हृदय में ननवास करते हैं। वे आपको मनचाही वस्तु देंगे। यनद आपको महात्माओं ंका सत्संग न प्राप्त हो, तो आत्म-साक्षात्कार-प्राप्त सन्त-महात्माओं ंऔर भागवतों ंद्वारा रनचत सद्ग्रन्थों ंको पनढ़ए।

७. सत्संग का संचालन-संन्यानसयों ंके प्रनत

संन्यासी वह है नजसने देहाध्यास, स्वाथा, वासना, अहंकार, अनभमान का त्याग कर नदया है। ब्रह्मा के चार मानस-पुत्र (श्री सनक, सनन्दन, सनत्कुमार और सनत्सुजात), श्री दत्तात्रेय और श्री शंकराचाया शुद्ध ननवृनत्त-पथ के अग्रदूत हैं। वे संन्यास-आश्रम के जनक हैं।

समय की गनत

आज का नवश्व आनथाक, जातीय, सामानजक, राजनीनतक, मनोवैज्ञाननक, औद्योनगक तथा आध्यास्त्मक प्रगनत भी चाहता है। आध्यास्त्मक पक्ष की कभी भी उपेक्षा नहीं ंकी जानी चानहए। वही तो सभी प्रगनतयों ंका आधार है। आजकल कमायोग-क्षेत्र के नेता गण केवल कमा पर ही अनधक बल देते हैं और जीवन के आध्यास्त्मक पक्ष की पूणातः अवहेलना करते हैं। यही नहीं, ं अनेक संसथाओं ंके संन्यासी जन भी केवल समाज-सेवा ही कर रहे हैं। कुछ संन्यानसयों ं में केवल पास्ण्डत्य है। वे समाज से थोडा सम्मान प्राप्त कर लेते हैं। उन्होंने जीवन के नचन्तन-पक्ष को नतलांजनल दे रखी है। उनमें आत्म-बल तो है नहीं; ं अतः वे जनता के हृदय पर सच्चा और सथायी प्रभाव नहीं ं िाल सकते।

आध्यास्कि व्यस्क्तयों, योनगयों, ज्ञाननयों तथा संन्यानसयों को तो कानताक मास के दूज की तरह या धूमकेतु के रूप में नवश्व-रंगमंच पर कुछ क्षण के नलए ही पदापाण करना चानहए अथवा प्रभु ईसा के समान सावाजननक क्षेत्र में प्रकट हो कर महान् कायों के सम्पादनाथा अपनी शस्क्त प्रदान करनी चानहए और नफर वहााँ से तुरन्त अलग हो जाना चानहए। अनधक काल तक आध्यास्कि वगा चलाने तथा आश्रम सथानपत करने का काया तो ननम्न वगा के संन्यानसयों का है। यह काया आध्यास्कि नदग्गजों की प्रकृनत के अनुकूल न होगा। नजस प्रकार गंगा जी वषा में केवल चार मास अपने पावन जल से पृथ्वी का नसंचन करती हैं, उसी प्रकार आचाया गण भी स्वल्प काल में ही सारे देश को ज्ञानामृत से आपूररत कर देते हैं।

सुखद जीवन का प्रलोभन

नकसी संन्यासी या गृहसथ को सुखपूवाक जीवन व्यतीत करने के नवचार से आश्रम की सथापना नहीं करनी चानहए। बहुत से संन्यासी जब आश्रम की सथापना करते हैं, तो प्रारम्भ में उनके नवचार बहुत शुद्ध होते हैं-आरम्भ में से यहााँ मेरा तात्पया है, जब वे साधनहीन रहते हैं; नकन्तु जब वे पयााप्त प्रशंसक या भक्त पा लेते हैं, तब नन:स्वाथा सेवा की भावना समाप्त हो जाती है और उनके हृदय में उसके सथान में स्वाथा-भाव घर कर लेता है। नजस उद्देश्य से उन्ोंने आश्रम की सथापना की थी, वह ननष्फल हो गया। अब उसने अथोपाजान की संसथा का रूप ले नलया। सामान्य लोगों को उस आश्रम के प्रनत कोई आकषाण नहीं रहा। यनद संसथा का प्रधान वैराग्य और त्यागमय जीवन व्यतीत करता है, तो उसका आश्रम अनन्त शास्न्त, सुख और आनन्द का केन्द्र बन जाता है। लाखों लोग उस ओर आकनषात होते हैं। नवश्व को ऐसे आश्रमों की सदा आवश्यकता रहेगी नजनके प्रधान महान् आध्यास्कि आचाया हों।

कुछ नवयुवक संन्यासी कुचला सेवन करते हैं। वे एक वषा में उसके १२० बीज ननगल जाते हैं, तीन वषा तक लघु नसद्धान्त कौमुदी तथा न्याय का अध्ययन करते हैं और अपने को सच्चा नसद्ध पुरुष मान कर सांसाररक लोगों के साथ मुक्त रूप से नमलते-जुलते हैं। यह उनकी भयंकर भूल है। कुचले से नपुंसकता आती है; नकन्तु नपुंसकता से ब्रह्मचया का पालन तो नहीं होता। यह कहने की आवश्यकता नहीं है नक उनकी शीघ्र ही अधोगनत होती है। पूणा ज्ञानी और योनगयों को भी बहुत सावधान रहना चानहए। उन्ें सांसाररक लोगों के साथ अनधक सम्पका बढ़ाने से बचना चानहए। मछली को मैथुन करते देख कर एक महान् ऋनष में काम-वासना जाग्रत हो उठी। मनहलाओं की चूनडयों की झनकार, रंगीन और बूटेदार सानडयों का दृश्य मन में तीव्र वासना उत्पन्न करते हैं। उनका संसगा दूनषत है। काम-वासना बडी प्रबल है। माया रहस्यपूणा है। साधक सावधान!

रसास्वाद तथा सुस्वादु भोजन के कारण ही असंयनमत युवक साधक, ब्रह्मचारी तथा संन्यासी सत्संग के बहाने गृहसथों के ननकट-सम्पका में आते हैं। साधको! क्ा आपने सुस्वादु भोजन के नलए ही अपने माता-नपता को छोडा, अपने पद तथा सम्पनत्त को त्यागा तथा संन्यास-मागा ग्रहण नकया अथवा आि-साक्षात्कार के नलए आपने यह सब-कुछ छोडा? यनद आपने सुस्वादु भोजन के नलए ही उपयुाक्त वसुतुओं का त्याग नकया है, तो अच्छा यह होता नक आप संसार में रह कर ही अथोपाजान कर आनन्द लेते। संन्यास-आश्रम को कलंनकत न करें। यनद आप नजह्वा का ननयन्त्रण नहीं कर सकते, तो गेरुए वस्त्र को दूर फेंनकए, संसारी बन जाइए, कुछ काम करके अथोपाजान

कीनजए। कमायोग के ि◌ारा आे-नवकास कीनजए। नजह्वा को ननयस्न्त्रत नकये नबना मन का ननयन्त्रण सम्भव नहीं ◌ं है।

जब एक व्यस्क्त गेरुआ वस्त्र धारण करता है, तो उसे स्मरण रखना चानहए नक वह जीवन के उच्चतर क्ेषेत्र में प्रवेश कर चुका है, उस पर बडा उत्तरदानयव है और वह शीघ्र ही संसार का एक महान् धानमाक और आध्यास्कि नशक्षक बनने वाला है। उसे नदव्य गुणों ◌ं के अजान का और पनवत्र तथा वैराग्यमय आदशा जीवन व्यतीत करने का यथाशक् प्रयास करना चानहए।

क्ा यही सतं्संग है?

आजकल सतं्संग का अध:पतन हो गया है। वह माननसक मनोरंजन का साधन बन गया है। संन्यानसयों ◌ं तथा गृहसथों ◌ं के बीच सन्ध्या-समय एक घण्टा वेदान्त-चचाा, साथ ही संसारी बातें, कुछ राजनीनत, कुछ परननन्दा, कुछ चुगली, हा-हा-ही-ही, व्यथा की बातें - इसे ही सतं्संग का नाम नदया जाने लगा है। कई वषा तक सतं्संग करने के अनन्तर भी सतं्संग करने वाले संन्यानसयों ◌ं और श्रोताओं ◌ं का मन उसी स्सथनत में बना रहता है। उनमें आध्यास्कि प्रगनत नहीं ◌ं हो पाती।

जब भी साधु-संन्यासी संसार में नवचरण करें, तो उनें् गृहसथों ◌ं के समक्ष वैराग्यमय जीवन का आदशा प्रदनशात करना चानहए। उनें् गृहसथों ◌ं से जीवनोपयोगी वसुतुएँ ही स्वीकार करनी चानहए। उनके साथ मुक्त रूप से नमलना-जुलना नहीं ◌ं चानहए। उनें् गााँव या नगर के बाहर एकान्त सथान में रहना चानहए। आध्यास्कि वगा चलाने में उनें् बहुत ही गम्भीर रहना चानहए। बीच-बीच में सांसाररक बातों ◌ं की चचाा नहीं ◌ं करनी चानहए। हास्यजनक कहाननयााँ अनधक नहीं ◌ं कहनी चानहए। हाँसी-मजाक नहीं ◌ं करना चानहए। वहााँ का वातावरण पनवत्र, शान्त और गम्भीर होना चानहए नजससे श्रोता मन्त्र-मुग्ध हो जायें। पूणा शास्न्त का वातावरण आवश्यक है, तभी गृहसथ जन प्रभानवत होंगें, तभी वे अनुभव करेंगे नक उनें् सतं्संग से कुछ प्रास्प्त हुई है।

खीर-परााँठा-पक्षी

गृहसथों ◌ं सेसंन्यासीजनज्यों–ं हीबार-बारवसुतुओं ◌ं कीमााँगकरनेलगतेहैं,त्यों–ं हीउनका प्रभावऔरसिानघटनेलगताहै।उनें्वहसथानत्यागकरनेकोबाध्यहोनापडताहै।कुछ ननलिासंन्यासीकईमहीनों ◌ं तकजोंककीतरहगृहसथों ◌ं सेनचमटेरहतेहैं।वेतोखीर-परााँठा-पक्षी हैं,सचे्चेसंन्यासीनहीं।◌ं आगामीजनगणनाकानववरणप्रसुतुतकरतेसमयअनधकाररयों ◌ं कोइस नवषयमेंबहुतसावधानरहनाचानहए।इनव्यस्क्तयों ◌ं कोसाधु-संन्यानसयों ◌ं कीश्रेणीमेंनहीं ◌ं रखना चानहए। ये लोग तो रॉंगे वस्त्र में पेशेवर हैं जैसे नक मेमने की खाल ओढ़े भेनडया। सचे्चे संन्यानसयों ◌ं कीनवश्वसनीयसूचीहोनीचानहए।साधुओं ◌ं कीसंख्याव्यथामेंबढ़ानेतथाउसेबढ़ाकरचौहत्तर लाख बताने की क्ा आवश्यकता है? आपको तो दो हजार से अनधक अचे्छे सुसंसूकृ त संन्यासी नहीं ◌ं नमलेंगे,जोअपनेनलएऔरअन्ततःदेशकेनलएउपयोगीहों।◌ं सच्चासाधु-संन्यासीतोप्रकाशमान् सूयाके समानहै।वहतोअहननाशप्रकाशनवकीणाकरतारहताहै।

साधु-संन्यासी इधर-उधर घूमने तथा भाषण देने के बदले अपनी कुनटया के पास ठोस और कुशल काया कर सकते हैं। जब पुष्प नवकनसत होता है, तो वह भौरों ंको ननमन्त्रण नहीं ंभेजता। वे स्वयं ही आ जाते हैं। इसी प्रकार सचे्चे सत्यान्वेषी साधक सचे्चे संन्यानसयों ंकी कुनटया पर स्वयं उपस्स्थत हो जाते हैं। संन्यानसयों ंको इधर-उधर जाने और अपना नवज्ञापन देने की आवश्यकता नहीं ं है। सावाजननक मंच पर जो भाषण नदया जाता है, उसका प्रभाव केवल आधे घण्टे तक ही रहता है। कुछ हो-हल्ला, लडाई-झगडे, तानलयों ंकी गूंज, 'क्या खूब, क्या खूब' की आवाज सुनायी देती है। परनु्त सचे्चे संन्यासी की कुनटया पर तो सचे्चे अनधकारी ही जायेंगे। इन साधकों ंके हृदय ऐसे संन्यानसयों ंके वचनामृत से पररषृ्कत हो जायेंगे। संन्यानसयों ंके नलए साधकों ंका प्रनशक्षण ही सबसे बडी सेवा है। तब प्रते्यक साधक शास्न्त, आनन्द और ज्ञान का केन्द्र बन जायेगा। नकनु्त जब संन्यासी इधर-उधर भ्रमण करते हैं, तो उनका अमूल्य समय व्यथा जाता है; क्ोंनंक तब सभी प्रकार के लोग कुतूहलवश उनसे नमलने आते हैं।

सचे्चे संन्यासी प्रकाश-स्तम्भ हैं जो अपने आलोक से नवश्व का पथ-प्रदशान करते रहते हैं। नजस प्रकार प्रकाश-स्तम्भ सुदूर सागर में स्स्थत जलपोतों ंको प्रकाश देता है, उसी प्रकार संन्यासी अज्ञानान्धकार के पंक में िूबे हुए जीवों ंको नदव्य प्रकाश देते हैं। वे समस्त नवश्व को चलायमान कर सकते हैं।

सचे्चे संन्यानसयों ंको शत-शत प्रणाम जो अपना सवास्व त्याग का सन्मागा पर आरूढ़ हैं। उन संन्यानसयों ंका हानदाक अनभनन्दन है जो ननज-स्वरूप में स्स्थत हैं, ब्रह्मननष् हैं। पररव्राजकों,ं आचायों, ब्रह्मनवद्या के गुरुओं ंको प्रणाम जो सवात्र आिज्ञान प्रसाररत करते हैं, हम सबको उनके आशीवाादप्राप्त हों!ं

८. पे्ररणादायी कथाएँ

ऋनष नवश्वानमत्र तथा वनसष्

एक बार ऋनष नवश्वानमत्र तथा वनसष् में नववाद हुआ। नवश्वानमत्र महान् तपस्वी थे। अपनी तपश्चयाा के बल से उन्होंनें नत्रशंकु के नलए तीसरे जगत् की सृनष्ट की थी। नवश्वानमत्र ने वनसष् से कहा : "इस संसार में तप ही सवाश्रेष् है।" वनसष् ने इस पर आपनत्त की और कहा : "सत्संग तो तपस्या से भी श्रेष् है।" अब उन दोनों ने इस नवषय में ब्रह्मा का मत जानने के नलए उनके पास जाने का ननश्चय नकया। वे दोनों ब्रह्मा के पास पहुँचे और उनका अन्तिम ननणाय जानने के नलए उनके सामने अपना नवषय रखा। भगवान् ब्रह्मा ने कहा : "मैं सृनष्ट-काया में व्यस्त हूँ। मेरे पास समय नहीं है। कृपा कर भगवान् नशव के पास जाइए। उनके पास पयााप्त समय है। अभी उनके पास कोई काया नहीं है। उनका काया तो प्रलय काल में ही आरम्भ होता है।"

इस पर नवश्वानमत्र भगवान् नशव का नवचार जानने तथा अन्तिम ननणाय सुनने के नलए उनके पास गये। भगवान् नशव ने कहा : "इस समय तो मैं अपने एक भक्त को देखने जा रहा हूँ। अभी मेरे पास समय नहीं है। आप कृपा कर भगवान् नवष्णु के पास जाइए। वे आपकी बातों को ध्यान से सुनेंगे।" तब वे भगवान् नवष्णु के पास गये। भगवान् नवष्णु ने कहा : " इस नवषय का ननणाय नहीं कर सकता। कृपा कर आनदशेष के पास जाइए। वे अपनी सहस्र नजह्वाओं से सदा राम नाम जपते रहते हैं। वे महान् भक्त हैं। वे ही अन्तिम ननणाय देने के नलए योग्य पुरुष हैं। वे महान् ज्ञानी भी हैं।'

इस पर वे दोनों आनदशेष के पास गये और अपने-अपने दृनष्टकोण उनके समक्ष रखे। आनदशेष ने उत्तर नदया: "मैं ननश्चय ही अपना मत दूँगा। कृपा कर मेरे मस्तक पर से पृथ्वी का बोझ हटाइए; तभी मैं इस नवषय पर अपने नवचार प्रकट कर सकूँगा।" तब उन दोनों ने कहा : "आनदशेष जी ! इस बोझ को हटाने का उपाय कृपा कर बताइए।" आनदशेष ने उत्तर नदया : "आप लोग कृपा कर अपनी तपश्चयाा और सत्संग का फल मुझे दे दें। इससे मैं भार-मुक्त हो जाऊँगा।

नवश्वानमत्र ने उत्तर नदया : "बस, इतना ही? मैं आपको अपनी एक सौ वषा की तपस्या का फल देता हूँ।" इससे आनदशेष के नशर का बोझ दूर नहीं हुआ। तब नवश्वानमत्र ने कहा: "अब, मैं आपको अपने एक हजार वषा के तप का फल देता हूँ।" अब भी आनदशेष का भार दूर नहीं हुआ। तब नवश्वानमत्र ने कहा : "अब मैं अपने समस्त जीवन के तप का फल देता हूँ।" आनदशेष का भार इससे भी दूर नहीं हुआ।

अब वनसष् ने कहा: "मैं अपने एक क्षण के सत्संग का फल आपको देता हूँ।" आनदशेष के नशर का बोझ तत्काल दूर हो गया।

इस पर नवश्वानमत्र का नशर लिा से झुक गया। उन्होंनें न तो आनदशेष से और न वनसष् से एक शब्द भी कहा। उन्होंनें यह अनुभव नकया नक तप से सत्संग श्रेष् है। उनका तप का अनभमान चूर-चूर हो गया।

साधकों को संसार-सागर का सन्तरण करने के नलए सत्संग एक सुरनक्षत दृढ़ नौका के समान है। सत्संग की मनहमा अवणानीय है। सभी शास्त्र सत्संग की बडी मनहमा गाते हैं। सत्संग का आश्रय लेने से सभी कुछ सुलभ हो जाता है। कुसंस्कारों को सुधारने और हृदय में वैराग्य उत्पन्न

करने के नलए सत्संग ही एक अमोघ साधन है। माया के प्रलोभन तथा आक्रमण से साधकों ंको बचाने के नलए सत्संग ही अजेय गढ़ है। सत्संग के नबना आध्यास्कि प्रगनत सम्भव नहीं ंहै।

सत्संग, शास्न्त, सन्तोष तथा नवचार-ये मोक्षद्वार के चार प्रहरी हैं। सत्संग इनमें वररष् है। यनद आप सत्संग से मैत्री कर लें, तो अन्य तीनों ंप्रहरी भी शीघ्र ही आपके नमत्र बन जायेंगे और आप मोक्ष के परम धाम में बडी सुगमता से प्रवेश कर सकेंगे।

सन्त हररदास तथा पनतत नारी

श्री चैतन्य महाप्रभु के नशष्य सन्त हररदास एक बार नवचरण करते हुए एक ग्राम में जा पहुँचे। वह रात-नदन हरर-नाम-स्मरण में ही लगे रहते थे। उनके कीतान से पास में रहने वाले एक पुनलस सुपररन्टेण्डेन्ट (आरक्षी-अधीक्षक) को बाधा पहुँचती थी। उनको पथभ्रष्ट करने के नलए उसने एक उपाय खोज ननकाला। इस उद्देश्य से उसने एक परम सुन्दरी वेश्या को हररदास के पास
भेजा। अपने सौन्दया और मादक नचतवन पर गवा करने वाली वह वेश्या एक रानत्र को सन्त हररदास के पास पहुँची। भला एक सन्त अपनी अनवचल भस्क्त से कैसे निग सकता था। हररदास रात भर अनवराम अ गनत से नाम-स्मरण करते रहे। प्रातःकाल उस वेश्या को अपने सामने देख में कर उन्होंनें कहा : “कृपा कर कल रात को आइए। तब मैं आपसे बात कर सकूँगा।" ऐसा कह कर वे पुनः नाम-स्मरण में संलग्न हो गये। उस वेश्या प को आश्चया हुआ। 'भला यह कैसा आदमी है? कदानचत् कल मैं अपने उद्देश्य में सफल हो जाऊँगी' – इस प्रकार सोच कर वह वहाँ से चली गयी।

दूसरी रात को वह वेश्या दूने उत्साह के साथ पुनः सन्त हररदास के पास आयी; परन्तु नफर भी वही बात हुई। उसने अपने मन में सोचा- 'सन्त ने मुझसे भी अनधक सौन्दयामयी कोई वसुतु प्राप्त कर ली होगी। यही कारण है, अन्यथा नजस प्रकार शलभ अनग्न में कूद पडता है, उसी प्रकार यह भी मेरे सौन्दया-जाल में फाँस गये होते। मैं भी उसी सौन्दयों ंके सौन्दया को प्राप्त करूँगी नजसने सन्त हररदास को मतवाला बना रखा है।'

सन्त के सम्पका से उसमें पररवतान आया। वह भगवत्-साक्षात्कार के नलए लालानयत हो उठी। सन्त हररदास ने उस वेश्या को एक आसन और माला दे कर उपदेश नकया नक वह अपनी समस्त सम्पनत्त ननधानों ंको दे कर प्रभु के नाम-स्मरण में संलग्न हो जाये।

कुछ काल के अनन्तर वह पनतता प्रभु की पनवत्र भक्त बन गयी। उसे भगवान् के दशान हुए और वह परमानन्द को प्राप्त हुई। सत्संग की ऐसी मनहमा है।

अपने पाँवों ंसे मेरी कमर दबाओ

एक बार एक सन्त ने अपने नशष्य की परीक्षा लेने के नवचार से उसे अपनी कमर को पैर से दबाने का आदेश नदया। सन्त ने कहा : "मेरी कमर में ददा है। नप्रय नशष्य, क्ा तुम अपने पाँवों ंसे उसे दबा दोगे?"

नशष्य ने उत्तर नदया : "महाराज! आपके पावन शरीर पर मैं अपना पााँव कैसे रखूाँ? यह तो बडा पाप है।"

सन्त ने उत्तर नदया -"पर क्ा तुम मेरी आज्ञा न मान कर अपने पैर मेरी नजह्वा पर नहीं ं रख रहे हो ?

इस उदाहरण से नशक्षा लेनी चानहए। गुरु की आज्ञा का पालन करने में नशष्य को अपनी बुस्द्ध नहीं ंलगानी चानहए। उसे उद्दण्डता त्याग कर गुरु के प्रनत सच्ची और सथायी श्रद्धा का नवकास करना चानहए। सन्त की सेवा प्रत्येक सम्भव उपाय से करनी चानहए। अपने शरीर से उनकी सेवा करनी चानहए, उनके रूप का नचन्तन करना चानहए, उनके आदेशों ंका अनवलम्ब पालन करना चानहए, उनके लक्ष्य की पूनता में लगना चानहए आनद। उनमें अनवचल श्रद्धा होनी चानहए। सन्तों ंकी लीला रहस्यमय है। आपसे सन्त जो भी सेवा लेते हैं, वह आपके नहत के नलए ही है। वे तो स्वयं ननसृ्पह होते हैं। अनेक प्रकार के आदेश दे कर और आपकी अनेक प्रकार से परीक्षा ले कर वे आपको नदव्य ज्ञान का अनधकारी बनाते हैं।

सन्तों ंकीसेवाचमत्कारदेखनेकेनलएनहीं ंकरनी चानहए। सन्त से आध्यास्िक लाभ प्राप्त करनाचानहए।भगवत्-साक्षात्कारके नलएहीसन्त की सेवा शरीर, मन और धिा से करनी चानहए।पत्नी,सन्तान,धन,सिानयाअन्यस्वाथा की भावना से सन्तों ंकी सेवा करना महामूखाता है।यद्यनपसन्तों ंके सम्पका सेसभीसांसाररकअध्यवसायों ंमें सफलता नमलती है, परन्तु वह तो हीरे के बदले पत्थर लेने के समान ही होगा।

९. सतं्संग और स्वाध्याय-सम्बन्धी नवनवध पद

महिाओं ◌ंके दशान का फल

महिाओं ◌ंकेदशान-मात्रसे,
भक्तों ◌ं में अनेक गुण आ जाते हैं,
उनके सभी पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं,
उनमें शे्रेयस् का अवतरण होता है,
नाम और यश प्राप्त होते हैं।
सतं्संग की मनहमा अवणानीय है।
सन्तों ◌ंकेआनशषसेमानवसहजही,
भव-बन्धन से मुक्त हो जाता है।

सतं्संग से न चूनकए

उदात्त नवचार,
जो एक वक्ता को कभी भी नहीं ◌ंसूझते,
दूसरे को सूझ जाया करते हैं,
आप उसे कभी न छोडें।
उदात्त नवचार
सम्भव है वक्ता को एकनदननसूझे,
नकनु्तु दूसरे नदन उसकीसूझमेंआजाये;
आप उसे कभी न छोडें।
महिाओं ◌ंऔर सन्तों ◌ंकेसतं्संगका
सुअवसर कभी न चूनकए।

साधुओं ◌ंके सम्बन्ध में ननणाय करना एक भूलच

केवल सन्त ही सन्त को परख सकते हैं।
कभी-कभी वे सवाज्ञ-सा दीख पडते हैं,
कभी-कभी वे अज्ञानी-सा दीख पडते हैं,
वे जानते हैं नक कब ब्रह्मननष् के समान व्यवहार करना चानहए
और कब एक नादान के समान

नके नवषय में कुछ भी ननणाय न करें।
यनद आप श्रद्धा, भस्क्त तथा आध्यास्त्मिक नपपासा के साथ
उनचत भाव ले कर उनके पास जायें
तो वे आपको सवोच्च ज्ञान प्रदान करेंगे।
यनद आप दुभाावना से उनके पास जायेंगे
तो वे उन्मत्त के समान व्यवहार करेंगे,
नजससे आप धोखे में पड जायेंगे
और आपको भारी क्षनत उठानी पडेगी।

साधु कौन है ?

बहुत से व्यस्क्त सोचते हैं
साधु को केवल दो रोटी खानी चानहए;
यनद वह तीन या चार रोटी खाता है
तो वह साधु नहीं।ं
साधु को केवल एक छोटा तौनलया पहनना चानहए;
यनद वह कमीज या कोट पहनता है
तो वह साधु नहीं।ं
अज्ञान, भ्रास्न्त, मूखाता और दुष्टता की
यह कैसी भयावह स्स्थनत है।
इनसे साधुओं ंके नवषय में कुछ ननणाय न करो।
त्याग एक माननसक स्स्थनत है
और साधुता आन्तररक नवकास।

नकली सन्त

वह लम्बी जटाएँ और दाढ़ी रखता है,
वह साथ में योग-दण्ड और कमण्डल भी नलये नफरता है,
वह 'नशवोऽहम्', 'राम-राम' कहता रहता है,
वह अनेकों ंमालाएँ गले में धारण करता है।
वह गीता और रामायण के ग्रन्थ अपने साथ रखता है,
वह अद्धाननमीनलत नेत्र से पद्मासन में बैठता है।
वह कई नदनों ंतक ननराहार रहता है।
वह ढोंगी है, नकली सन्त है।
नमत्रो सावधान! बनु्धुओ सावधान !
वह सन्त नहीं,ं भागवत के उसमें कोई लक्षण नहीं,ं
वह आपका गला घोंटं देगा।
वह मक्कार है, धूता है,

उसेअवश्य ही नरकवास नमलेगा।

नकली संन्यासी

नकली संन्यासी गैररक वस्त्र धारण कर ,
पनवत्र संन्यासाश्रम को कलंनकत करते हैं ,
वे उद्दण्ड हैं, कपटी हैं;
और हैं ननरंकु श।
वे छद्मवेश धारण कर घूमते-नफरते हैं,
वे जाली सन्त हैं; नवतण्डावादी हैं।
वे सन्त-परम्परा को दूनषत करते हैं।
नमत्रो, उनसे सावधान रहो, सतका रहो।

संग-दोष

कुसंगनत का दोष संग-दोष है।
साधकों ंको बहुत सावधान रहना है,
उन्हें सांसाररक लोगों ंसे स्वच्छन्द रूप से नहीं ंनमलना चानहए,
नहीं ंतो उनका भयंकर पतन होगा।
वे संसाररयों ंके जीवन की नकल करने लगेंगे
और नजन नवषय-वसुतुओं ंको त्याग नदया है,
उन्हें पुनः उपभोग करने लगेंगे।
वे सांसाररकता के धरातल पर
नीचे उतर आयेंगे।

सभी प्रकार की सांसाररक वासनाएँ,
उनके मन में प्रवेश कर जायेंगी।
अतः जब तक उनका नव-गठन नहीं ंहो जाता
और उन्हें पूणा ज्ञान की प्रास्प्त नहीं ंहो जाती,
तब तक एकान्त-सेवन ही करना चानहए।

कुसंगनत का दुष्प्रभाव

वनमेंएकतपस्वी था।
कईवषोंसेवह तप कर रहा था।
उसनेनारीजानत को कभी देखा नहीं ंथा,

नमष्टान्न का आस्वादन नहीं ंनकया था।
वह वन के फल पर जीवन ननवााह करता था।
देश में एक बार अकाल पडा।
पस्ण्डतों ंने राजा को परामशा नदया
यनद वह तपस्वी राजधानी में लाया जाये
तो खूब वषाा होगी।
नकन्तु उसे लाने में बडी कनठनाई थी,
परन्तु कुछ नवयुवनतयााँ इस काम के नलए आगे आयीं, ं
उन्ोंनें कहा : "हम नकसी प्रकार उसे लायेंगी।
वाद्ययन्त्र और नाना प्रकार के नमष्टान्न के साथ
वे वन को गयीं।ं
वे गाने और नाचने लगीं, ं
नमष्टान्न को वृक्ष से लटका नदया।
उनके मधुर स्वर तपस्वी को कणागोचर हुए,
वह नवयुवनतयों ंके पास आया,
नमष्टान्न खाये,
नवयुवनतयों ंके प्रनत आकनषात हुआ।
नवयुवनतयों ंने कहा : "हे तपस्वी ! हमारे नगर को चनलए।
हम आपकी सेवा करेंगी।"
तपस्वी ने उनकी प्राथाना स्वीकार की।
और राजधानी में चला आया।
तब खूब वषाा हुई।
राजा ने उसका आदर-सत्कार नकया,
उसका वैराग्य शनैः-शनैः क्षीण होता गया,
उसे अपने पतन का पता लग गया।
उसने सोचा यह संग-दोष के कारण है।
नकसी को नबना कुछ कहे,
वह तत्काल रानत्र में वन को चला गया,
वहााँ वह पुनः तप करने में संलग्न हो गया
और अपनी पूवा-स्सथनत प्राप्त कर ली।

धमाग्रन्थों ंसे सब-कुछ सुलभ

श्रीमद्भागवत का श्रद्धापूवाक पाठ
आपको भस्क्त और वैराग्य प्रदान करता है।
नवष्णुपुराण का मनन,
सिसुतु के अनुसन्धान का अनधकारी बनाता है।
श्रीमिामायण का पनवत्रतापूवाक पाठ
सन्तनत और सम्पनत्त का प्रदायक है।
महाभारत का ननष्ठापूवाक स्वाध्याय

सभी पापों ंको नष्ट कर पनवत्र बनाता है।
स्वाध्याय से क्ा कुछ सम्भव नहींहै ं ?

वेद गुरु के समान हैं,

वेद, पुराण और काव्य
वे नदव्य जीवन यापन का आदेश देते
वे तका अथवा अनुरोध नहीं ंकरते।
पुराण सस्न्मत्र के समान हैं,
वे सत्कमा करने पर बल देते हैं,
इसके नलए वे नवनभन्न प्रकार के तका उपस्सथत करतेहैं
और सुरुनचपूणा कथाओं ंके दृष्टान्त देते हैं।
काव्य तो श्रद्धालु पत्नी के समान हैं,
वे आपके हृदय को जीत लेते हैं
और नदव्य जीवन की ओर आपको आकनषात करतेहैं।
उनमें से हर एक का अपना-अपना नवनशष्ट सथानहै,
और नवशेष स्वभाव के अनुकूल है।

१०. साधु-संन्यासी तथा सामानजक पुनरुत्थान

साधु तथा संन्यासी जगत्-नवधान के केन्द्र हैं। वे ही सबसे उपयुक्त अनधकारी हैं जो नक नवश्व में शास्न्त तथा समता को रख सकें। वे ही वास्तनवक नननमत्त हैं नजनके िारा आक्रमणकारी राष्टरों ंको एकता के सूत्र में सम्बद्ध नकया जा सकता है। वास्तनवक साधु तथा संन्यासी, नजनका लक्ष्य नवश्व-बनुधुव है, अपने जीवन के सभी स्तरों ंमें महान् अनुभवों ंसे हो कर गुजरते हैं। साधु

अथवा संन्यासी का जीवन सबसे अनधक कष्टकर होता है। यह दोनों ंओर धार रखने वाली तलवार के समान है। यनद साधु पूणातः सदाचारमय तथा शुद्ध जीवन नहीं ंनबताता है, तो वह भ्रष्ट हो जाता है।

आज कल हम ऐसे लोगों ंको पाते हैं जो गैररक वस्त्र धारण कर साधु बनने का स्वाँग भरते हैं; परन्तु अपने दुराचरण के कारण समस्त संन्यासी-जगत् पर लांछन लगाते हैं। वे शाश्वत तथा शास्त्र-ननधाररत ननयमों ंकी ननतान्त अवहेलना करते हैं। संसार के लोग उनकी उग्र आलोचना करते हैं। इस तरह लोग नफर समस्त संन्यानसयों ंकी ननन्दा करते हैं।

ऐसे स्वाँगों ंतथा कुकृत्यों ंको रोकने के नलए, साधु-संन्यानसयों ंको मानव-जानत के उपदेशक के रूप में लाने के नलए तथा उनके गत सिान को पूवावत् बनाने के नलए योग्य संसथाओं ंके रूप में इन साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंका संगनठत होना अत्यन्त आवश्यक है।

समस्त संसार के कल्याण के नलए सचे्चे संन्यानसयों ंतथा साधुओं ंका पालन तथा अनुशासन अत्यन्त ही आवश्यक है।

ऐसे अनधवेशन, सिेलन, सभा इत्यानद को नहन्दू-धमा के साधुओं ंएवं संन्यानसयों ंमें ही सीनमत नहीं ंरहना चानहए, वरन् संसार के सभी धर्मों-ईसाई, इस्लाम, नसक्ख धमा के प्रचारकों, ंफकीरों ंतथा साधुओं ंको भी इसमें शानमल करना चानहए। सारे धर्मों का मूल एक ही है। सारे धर्मों का मौनलक अनधष्ठान तथा मौनलक उदे्देश्य एक ही है। नजन लोगों ंने संसार की आसस्क्तयों ंका त्याग नकया है तथा सनातन सत्य की खोज में अपने जीवन को अनपात नकया है, उनके व्यवहार में नवभेद नहीं ंहोना चानहए।

संसार के सभी सथानों ंके साधुओं ंमें पूणा संगठन से साधु-समाज को लाभ होगा। इस तरह समस्त संसार की उन्ननत हो सकती है। यह मठ, चचा, अन्य धानमाक संसथाएँ तथा उनके प्रधानों ंमें भी मेल होना सम्भव है। सब धर्मों के प्रधानों ंको एक-दूसरे के साथ हाथ नमला कर चलना होगा। उनको इस संगठन के काया-व्यापार में ठोस सिनतयाँ प्रदान करनी होंगी।

साधुओं ंका संगठन

यह समय की माँग है। यनद साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंका पूणा संगठन हो जाये, तो इससे बहुत लाभ होगा। आप नया युग, नयी संसृ्कनत का ननमााण कर सकेंगे।

संगठन के नलए तो सभी पुकार रहे हैं। भारत का हर एक गृहसथ इसकी बात करता है, पर हम संगठन करें कैसे ? यही समस्या है। यही प्रश्न है।

साधुओं ंका समाज जनटल तथा नवषम सम्प्रदायों ंके िारा बना है। इसमें बहुत से पन्थ तथा सम्प्रदाय हैं; जैसे वैरागी, कबीर पन्थ, दादू पन्थ, गोरखनाथ सम्प्रदाय, ननमाल, उदासी, दशनाम संन्यासी जो शंकर के अनुयायी हैं, श्री रामकृष्ण नमशन के संन्यासी, ननरंजनी अखाडे के संन्यासी, नागा आनद।

ऋनषकेश साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंका घर है। गंगा के नकनारे इस नचत्ताकषाक मनोरम सथल को साधुओं ंने तपश्चयाा तथा ध्यान के नलए चुना है। आध्यास्कि स्पन्दनों ंसे यह सथल पूणा है। प्राचीन ऋनषयों ंने इस सथल पर रह कर तपस्या की है। नहमालय में उत्तरकाशी तथा हररिार आनद केन्द्र हैं जहााँ बहुत से संन्यासी रहते हैं। यहााँ पर दो मुख्य क्षेत्र हैं जो साधुओं ंको मुफ्त भोजन देते हैं। जहााँ-कहीं ंभी भोजन की मुफ्त व्यवसथा हो, वहााँ सभी प्रकार के लोग संन्यास का रंगीन-वस्त्र पहन कर आ जुटते हैं। इस प्रकार सामानजक बुराई घुस जाती है तथा लोगों ंकी पनवत्रता नबगड जाती है। उपिवी लोग इन पनवत्र सथानों ंमें आ कर रहने लगते हैं। वे अपने उपिव-कायों को जोरों ंके साथ करने लग जाते हैं।

साधु सम्प्रदाय के प्रधानों ंमें संगठन के नलए काफी उतुसुकता होनी चानहए; तभी यह काम सुचारुरूपेण चल सकता है। उन्ें एक-साथ बैठ कर मतभेद नमटा कर पूरे हृदय के साथ यह काया करना चानहए। यह बहुत ही कनठन काम है। पूणा संगठन लाने में काफी समय लग जायेगा।

सारे मण्डलेश्वर, मठों ंके प्रधान, धानमाक संसथाओं ंके प्रधान, सभी ख्यानत-प्राप्त संन्यासी तथा साधुओं ंको इस काया के नलए आगे बढ़ना चानहए। कोई भी संन्यासी अकेला इस काया को नहीं ंकर सकता। श्री शंकराचाया को राजाओं ंकी सहायता तथा सहयोग प्राप्त था। उन्ोंनें अपने प्रचार-काया के नलए नागाओं ंकी सेना बनायी थी। अतः इस काया के नलए भी मनुष्य-शस्त्र, अथा-शस्त्र तथा स्वयंसेवकों ंकी सेना की आवश्यकता है।

आज संन्यानसयों ंके भीतर बहुत से पाशवी तत्त्व रंगीन वस्त्र में घुस आये हैं। उनको ननदायतापूवाक अलग करना होगा। वे बहुत उपिव करते हैं। संगठनों ंको इन लोगों ंके िारा बहुत-सी बाधाएाँ प्राप्त होंगी। उनको इस नवरोध का सामना करने के नलए सदा तैयार रहना चानहए। केवल जोरदार भाषणों ंके िारा ही साधुओं ंका संगठन नहीं ंहो सकता। हमें मजबूत, अथक काम करने वाले बुस्द्धमान् ननष्काम्य सेवकों ंकी आवश्यकता है। हमें उदार-हृदय सिनों ंकी भी सहायता चानहए। तभी हम इस काया में सफल हो सकते हैं।

अब समय आ गया है। इस काया को शीघ्र ही हाथ में ले लेना चानहए। सारे धानमाक प्रधान सहायता करें; तभी सुचारुरूपेण लोक-संग्रह नकया जा सकेगा। तभी हम इस जगत् में वास्तनवक धानमाक क्रास्न्त ला सकते हैं।

संन्यानसयों ंके नलए कताव्य

समाज के रूप में संन्यानसयों ंतथा साधुओं ंके नलए एक सावाभौनमक कताव्य है नजसकी पूनता के नलए ही उनका अस्स्तव है। वे इस भूनम की आध्यास्किता के संरक्षक हैं। मानवता की प्रगनत तथा पूणाता में उनका महत्त्वपूणा हाथ है। इस महान् उद्देश्य की पूनता के नलए ही उनका अस्स्तव है। इसीनलए संन्यासी लोग संसार से अपने को अलग रखते हैं। इसीनलए वे लोग संयम में कुशल होते हैं; परन्तु भाग्यवश हम लोगों ंने पाथाक् को सथायी बना िाला है तथा बहुत हद तक साधु-समाज अपने को अन्य मानव-जानत से अलग मानता हुआ संघषिााक जीवन-यापन करता है।

दूसरों ंके साथ अपना सम्पका हटा लेने के कारण वे अपना कताव्य भी भूल चुके हैं। अन्य तीन आश्रमों ंके नलए प्रेरक तथा उपदेशक बनने का जो उनका पनवत्र कताव्य है, उसी की वे लोग

अब अवहेलना करने लगे हैं। हम संन्यानसयों ंको एक बार नफर बद्ध-पररकर हो कर राष्टरीय जीवन में अपने ननधााररत काया को पूरा करना चानहए। हमको संगनठत हो कर एक संसथा के रूप में पररणत होना चानहए। इस संसथा का आदशा है रुनधर एवं संघषा में नचरकाल से सने हुए इस संसार में भ्रातृव एवं शास्न्त के नवयुग के आवाहनाथा नन:स्वाथा रूप से पूरे हृदय से संलग्न होना है।

नयी दुननया के पुनननामााण-काया में मानव जानत के प्रत्येक अंग को अपना-अपना हाथ बंटाना है। यनद नयी सभ्यता को सथायी बनाना है, महत्तर युगों ंकी प्रस्तावना के रूप में लाना है, तो उसको आध्यास्कि तत्त्वों ंके शाश्वत मूल्य पर आधाररत होना होगा। नयी मानवता के नलए भौनतक तथा आध्यास्कि आधार को प्रसुतुत करने का काया संसार के साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंका है।

आने वाली सन्तनत को आध्यास्कि बनाने का उत्तरदानयव साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंका है। यह उन पर ही पूरी तरह ननभार करता है। इस भूनम की मनहमामय परम्परा को बनाये रखने के नलए तथा समाजोपकारी संसथाओं ंके रूप में अपने सिान्य सथान को कायम रखने के नलए उनको ऐसा करना है।

नैनतक तथा आध्यास्कि मामलों ंमें पथ-प्रदशान के नलए सामान्य जनता सदा से ही साधुओं ं तथा संन्यानसयों ंका मुँह ताकती आयी है। अतः हमको आदशा जीवन के िारा अपने काया में संलग्न होना है। देश के सारे साधुओं ंको संघनठत संसथा के रूप में लाने के नलए सबको पूरे उत्साह के साथ काया करना चानहए। तभी हमको इसमें पूरी सफलता नमल सकती है। हम लोगों ंके सामने जो महत्तर काया है, उसको दृनष्ट में रखते हुए भारत के सारे तीथा-सथानों ंमें हम साधुओं ंको सवाशस्क्तमान् प्रभु में पूरी श्रद्धा रख कर पूरी सच्चाई के साथ इस काया को आरम्भ करना चानहए।

संसार के साधुओं ंतथा महिााओं ंके बृहत् संगठन की ओर यह संगठन प्रारस्म्भक तैयारी के रूप में होगा। एक बार पुनः भारत को राजा भरत के पुनीत भारतवषा के रूप में पररणत करना होगा। तब भारत माता केवल नसद्धान्ततः ही सारे जगत् की जननी नहीं ंबनेगी, वरन् यथाथातः वह सारे जगत् की जननी होगी। इस ईश्वरीय काया में सफल होने का एकमेव साधन है- ननष्काम्य संगठन।

इस संगठन का प्रारस्म्भक काया होना चानहए अपने को उपयुाक्त उद्देश्य की पूनता के योग्य सक्षम एवं अनधकारी बनाना। इस लक्ष्य की प्रास्प्त के नलए सवाप्रथम संघ की एकत्र संख्या का नहसाब ले लेना होगा। नजस प्रकार महाभारत से पहले सेनाओं ंकी संख्या ली गयी थी, उसी प्रकार हमको भी अपनी शस्क्त का नहसाब रखना होगा; क्ोंनक हम सत्त्व तथा शुभ शस्क्त के द्योतक हैं। इस सत्त्व तथा शुभ का काम है संसार को आसुरी शस्क्तयों ंसे मुक्त करना तथा रखना।

कृतसंन्यासी तथा समाज-सेवा

हर एक छात्रावास में साधुओं ंतथा संन्यानसयों ंको सदा रहने के नलए आमस्न्त्रत करना चानहए। साधु प्रनतनदन नवद्यानथायों ंको सदाचार तथा आिोन्ननत के पाठों ंको दे। साथ-ही-साथ उनको ध्यान तथा उपासना का व्यावहाररक नशक्षण भी प्रदान करे। वह उनको भगवद्गीता, रामायण, भागवत तथा उपननषदों ंका ज्ञान प्रदान करे। तभी वे समुनचत रूप से ढाले जा सकते हैं तथा

उनके आचरण शुद्ध हो सकेंगे। आज के नवद्यानथायों ंकी दशा दयनीय है। वे ईश्वर तथा धानमाक ग्रन्थों ंके प्रनत अपनी श्रद्धा खो चुके हैं। वे अधानमाक बन गये हैं। नशक्षण-संसथाओं ंको चलाने वाली कायाकाररणी सभाओं ंके प्रधान जनों ंको चानहए नक वे संन्यानसयों ंके साथ अपना सम्पका सथानपत करें तथा अपनी संसथाओं ंमें संन्यानसयों ंको धानमाक उपदेशक के रूप में रख कर अपनी सन्तनत
को आध्यास्कि उन्ननत प्राप्त करने का सुअवसर प्रदान करें।

सप्ताह में एक बार अवश्य साधु अथवा संन्यासी को सरकारी जेल में पधारने के नलए
आमस्न्त्रत करना चानहए। वे कैनदयों ंके िारा कीतान तथा प्राथाना करायेंगे और नैनतक उपदेशों ंके
िारा उनको अच्छी आिाओं ंमें पररणत करेंगे। अज्ञान के कारण ही लोग चोरी तथा अन्य अपराध
करते हैं। यनद उनचत नशक्षा दी जाये तथा उनके अपराध को दूर कर नदया जाये, तो न अपराध
ही रहेंगे और न कारावास ही। ननश्चय ही तब इस पृथ्वी पर स्वगा का साम्राज्य हो जायेगा। क्ा इस
ओर मुक्त कैदी सनमनत अथवा अन्य संसथाएँ ध्यान न देंगी?

यनद कोई संन्यासी उस शहर में रहता है जहााँ पर अस्पताल है, तो उसे ननत्यप्रनत रोनगयों ं
से नमलने तथा उनमें उत्साह भरने का सुअवसर देना चानहए। वह उनकी शीघ्र रोग-मुस्क्त के नलए
प्राथाना करेंगे तथा उनसे भी भजन, कीतान तथा ध्यान आनद करायेंगे। साथ-ही-साथ उनको आिा
के अनामय तथा अमर स्वरूप का ज्ञान देंगे जो उनके शरीरों ंका अन्तवाासी है।

यनद उपयुाक्त सिनतयों ंको कायाास्न्वत नकया जाये, तो बहुत अच्छी आध्यास्कि उन्ननत हो
सकती है। आध्यास्कि उन्ननत होना आज की दुननया के नलए अत्यन्त आवश्यक है। यनद उनचत
अवसर नदया जाये, तो ननष्काम सेवा करने के नलए नशनक्षत संन्यानसयों ंका समुदाय अपने कुटीरों ं
से बाहर आ कर इस व्यस्त दुननया में प्रवेश करेगा। सामानजक कल्याण में ऐसी भि संसथाओं ंकी
महत्ता नकतनी है— इससे संसार को अवगत होना चानहए।

११. चयननका

सत्संग क्ा है ?

१. ब्रह्म में संस्सथत होना ही वास्तनवक सत्संग है। ज्ञाननयों ंकी संगनत भी सत्संग है। ऋनष-प्रणीत ग्रन्थों ंका स्वाध्याय भी सत्संग है। सत्संग से हृदय का तम दूर होता, सन्मागा नमलता तथा ज्ञान-सूया प्रकानशत होता है।

२. ज्ञाननयों ंकी संगनत सत्संग है। साधु, सन्त, महािा, योगी तथा संन्यानसयों ंकी संगनत में रनहए ,उनके अमूल्य उपदेशों ंको श्रवण कीनजए और उनका अक्षरशः पालन कीनजए। यही सत्संग है।

ईश्वर और सन्त

३. परमािा ही महान् कल्मषहारी हैं। सन्त भी महान् कल्मषहारी हैं।

४. अपररहाया आवश्यकता होने पर भगवान् ही साधु-सन्तों ंके रूप में प्रकट होते हैं।

५. भगवान् साधु-सन्तों ंके िारा ही अपना काया सम्पानदत करते हैं।

६. भगवान् अपने पूणा वैभव, असीम शस्क्त, ज्ञान तथा आनन्द के साथ सन्त में प्रकट होते हैं।

७. सन्त जन भगवान् के हृदय और भगवान् सन्तों ंके हृदय हैं।

८. सन्तों ंके सम्पका में आना तथा उनके सत्संग से लाभ उठाना अतीव दुष्कर है। भगवत्कृपा से ही उनके दशान और सत्संग प्राप्त होते हैं।

९. सन्तों ंके िारा ही ईश्वरीय कृपा काया करती है।

सन्तों ंकी मनहमा

१०. सन्त जन धमा के जीवन्त प्रतीक हैं और मानवता के सचे्च नहतैषी।

११. सन्त, महािा अथवा योगी तो चुम्बक हैं। वे शस्क्त और ज्ञान के केन्द्र हैं।

१२. जगत् के आश्रयदाता सन्त ही हैं। वे अजस्र पे्ररणा के स्रोत हैं। उनके माध्यमसेही असंसृ्कत लोगों ंमें दैवी कृपा का संचार होता है।

१३. सन्त वह लवण है नजससे समाज क्षय और पतन से सुरनक्षत रहता है।

१४. इस उद्दाम संसार-सागर में सन्त ही प्रकाश स्तम्भ हैं जो अनेकों ंप्रानणयों ंके जीवन-पोत को दुघाटना से बचाते हैं।

१५. आि-साक्षात्कार-प्राप्त सन्त सुख, आनन्द और प्रकाश के स्रोत हैं। उनका सानन्नध्य प्राप्त कर आि-नवकास कीनजए। श्रद्धा-भस्क्तपूवाक उनकी सेवा कीनजए।

१६. सन्त आध्यास्िक ज्ञान के स्रोत हैं। बडी नवनम्रता और श्रद्धा के साथ उनके पास जाइए। वे आपको नदव्य ज्ञान प्रदान करेंगे।

१७. सन्तों ंसे ज्ञान सीस्खए। वे आपके रक्षक हैं। उन्ें ही सन्त माननए नजनमें दैवी सम्पद् हो।

सत्संग के लाभ

१८. सन्त-महाािा तथा गुरु का सत्संग शीघ्र आध्यास्िक प्रगनत प्राप्त करने में बहुत ही महत्त्वपूणा भाग अदा करता है।

१९. अपनवत्र एवं दूनषत संस्कारों ंको पूणातः नवनष्ट करने तथा संसारी लोगों ंके मन को सन्मागा की ओर मोडने के नलए सत्संग एक सुगम तथा शीघ्रतम साधन है।

२०. सत्संग मन को उन्नत करता तथा उसे सत्त्व से आपूररत करता है। वह मन के कुनवचारों ंको नष्ट कर ब्रह्मज्ञान प्राप्त कराता है।

२१. सांसाररक नवकारों ंसे पूणा यह मन सत्संग के नबना ईश्वरोन्मुख नहीं ंहो सकता।

२२. सत्संग नववेक को जाग्रत करता है। सत्संग के नबना वैराग्य की प्रास्प्त नहीं ंहो सकती।

२३. सत्संग अज्ञान-नतनमर को दूर करता और सांसाररक भोगों ंके प्रनत मन में वैराग्य उत्पन्न करता है। अज्ञान रूपी मेघ को दूर करने के नलए सत्संग सूया के समान है। वह नदव्य जीवन यापन करने और ईश्वर के अस्स्तव में दृढ़ आसथा रखने को बाध्य करता है।

२४. सत्संग से साधकों ंमें सत्त्वगुण का उल्लेखनीय गनत से नवकास होता है। सत्संग साधक को अपनी प्रसुप्त शस्क्तयों ंको जाग्रत करने तथा अवांछनीय दुगुाणों ंका उनूमूलन करने के नलए शस्क्त प्रदान करता है।

२५. मोक्ष की प्रास्प्त में सत्संग प्रचुर सहायता प्रदान करता है। सत्संग के अनतररक्त अन्य कोई मागा ही नहीं ंहै। यह ताप-त्रय को नष्ट करता है। माया तथा उपिवी मन पर नवजय पाने का यह अचूक साधन है।

२६.माया के प्रलोभनों ंतथा आक्रमणों ंसे युवक साधकों ंकी रक्षा करने के नलए सत्संग अजेय दुगा है।

२७. नजस प्रकार िूबते हुए व्यस्क्त के नलए नाव ही सबसे बडा सहारा है, उसी प्रकार संसार-सागर में ननमग्न हुए लोगों ंके नलए सन्त जन ही एकमात्र आश्रय हैं।

२८. मोक्ष-िार पर सत्संग एक प्रहरी है। यनद आप इससे नमत्रता गाँठ लेते हैं, तो यह आपको अपने अन्य तीन नमत्रों–नवचार, शास्न्त और सन्तोष से पररचय करा देगा और आप शीघ्र तथा सरलता से आि-साक्षात्कार प्राप्त कर सकेंगे।

२९. सत्संग का फल अमोघ है।

३०. जीवन की सभी व्यानधयों ंके नलए सत्संग रामबाण औषनध है।

३१. सत्संग के समान प्रेरक, उत्कषाकारक, सान्त्वनादायक और आनन्दप्रद अन्य कुछ भी नहीं ंहै।

३२. मनुष्य को पनवत्र तथा नवभानसत करने वाली वसुतुओं ंमें सत्संग सबसे श्रेष् है।

३३. नकसी साम्राज्य पर शासन करने की अपेक्षा एक क्षण का सत्संग अनधक श्रेष् है।

३४. सन्तों ंका संग कीनजए। वे आपके घावों ंको भर देंगे, आपमें नवजीवन का संचार करेंगे, आपको नवयौवन प्रदान करेंगे और शास्न्त तथा आनन्द का मागा नदखायेंगे।

३५. सन्त-महािाओं,ं नसद्धों ंतथा ऋनषयों ंके उपदेशों ंका पालन कीनजए। उनकी िाि के साथ एकस्वर हो जाइए।

३६. जो व्यस्क्त अपने से बडों ंका तथा सन्तों ंका सिान करता है और श्रद्धा-भस्क्त के साथ उनको साष्टांग प्रणाम करता है, उसकी आयु, कीनता, सुख, शस्क्त और ज्ञान में वृस्द्ध होती है।

सत्संग से पररवतान

३७. मानव-मन बडा ही संवेदनशील है। यनद आप इसे कुसंग में रखेंगे, तो यह कुवृनत्तयों ं को ग्रहण करेगा और यनद आप इसे सत्संग में रखेंगे, तो यह नदव्य गुणों ंको ग्रहण करेगा।

३८. प्रोज्ज्वल आदशा अपने अनुरूप बनने की प्रेरणा देते हैं। यनद मन का ननयन्त्रण न नकया गया, तो बुरे आदशों का वैसा ही प्रभाव पडता है।

३९. यनद आप नकसी सन्त के पास जायेंगे, तो आपमें स्वभावतः शास्न्त और पनवत्रता की भावना उनदत होगी।

४०. जैसे अनग्न के सनन्नकट जाने से शीत, भय तथा अन्धकार जाता रहता है, उसी प्रकार सन्त के सानन्नध्य में रहने से दुबालता, सांसाररकता और अज्ञानता जाती रहती है।

४१. गंगा तो केवल उनके ही पापों ंको दूर करती है जो उसके जल से माजान करते हैं; नकन्तुु सन्त तो अपने पास आते ही मनुष्य को पनवत्र बना देते हैं।

४२. सन्तों ंके दृनष्टपातमात्र से पापी पनवत्र हो जाते हैं।

४३. सन्तों ंका दशान सुखकारी है, उनकी संगनत सदा शास्न्तदायक है और उनके साथ वाताालाप करना आनन्ददायक है।

४४. सन्त का स्मरण करते ही सभी बुरी कामनाएँ दूर हो जाती हैं।

४५. सन्त पुरुषों ंका नचन्तन करते समय मन उनके गुणों ंके अनुरूप आकार धारण कर लेता है और इस भाँनत पनवत्र बन जाता है।

४६. सन्तों ंकी जीवन-लीला का नचन्तन सत्संग के तुल्य है। उनके उपदेशों ंका स्वाध्याय भी सत्संग के समान ही है।

४७. सन्तों ंके जीवन का नचन्तन, उनका सत्संग तथा उनके आशीवााद प्राप्त करने का सौभाग्य होने से मनुष्य में शुद्धता, प्ेरेरणा और दैवी चेतना का आनवभााव होता है।

४८. सत्संग सचे्चे साधकों ंके जीवन में महान् सुपररवतान लाता है। यह उन्ें उतृ्कष्टता, शुनचता तथा आध्यास्त्मकता के उन्नत नशखर पर पहुँचा देता है। कट्टर भौनतकवानदयों ंपर भी इसका प्रभाव पडे नबना नहीं ंरहता।

४९. अल्पकाल के सत्संग से भी ईश्वर में नवश्वास दृढ़ हो जाता है।

५०. सन्त मौन रहते हैं। वे बहुत ही थोडे शब्द बोलते हैं; नकन्तु इन शब्दों ंका अनमत प्रभाव होता है। जो सन्त तथा उनके सने्देश को समझते हैं, उन्ें ये शब्द नवजीवन और आनन्द प्रदान करते हैं। सन्त भले ही मुख से कुछ न कहें, नफर भी उनकी उपस्स्थनत में साधकों ंकी सभी शंकाओं ंका ननवारण हो जाता है।

५१. सत्संग से प्रभु में प्ेरेम उत्पन्न होता है। प्रभु का प्ेरेम मोक्ष प्रदान करता है।

५२. एक पल का सत्संग भी जीवन-सागर को पार करने के नलए नौका का काम देता है।

सत्संग से लाभ प्राप्त करने की नवनध

५३. ज्ञान-नशखर पर आरूढ़ होने के नलए संघषारत आ्मआओं ंकी सहायता को जीवनु्मक्त सदाहीउद्यत रहते हैं। इस संसार में यही उनका काम है। साधकों ंको चानहए नक उनसे सहायता लेंऔरअपनी मनोवृनत्त ग्रहणशील बनायें।

५४. सत्संग से लाभ उठाने के नलए आप अपने को योग्य पात्र बनायें। सन्त के पास पूवा-ननणीत नवचार ले कर न जायें। उन्मुक्त तथा ग्रहणशील मन से जायें। नबना नकसी आशा के ही जायें। नवनम्र एवं श्रद्धा भाव से उनके पास जायें। उनकी जो बात रुनचकर हो, उसे ग्रहण करें।
यनद उनके कुछ उपदेश आपको नहीं ं जाँचते, तो उनके नवषय में अपना कोई मत शीघ्र न बनाइए। यनद आप उन उपदेशों ंका पसन्द नहीं ंकरते, तो उन्हें ग्रहण न कीनजए। जो दूसरों ंके नलए उपयुक्त है, हो सकता है नक वह आपके नलए उपयुक्त न हो; नकन्तु मूलभूत नसद्धान्तों ंमें कोई मतभेद नहीं ंहो सकेगा।

५५. सत्संग के िारा संसार-सागर को पार करने तथा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की सच्ची कामना होनी चानहए।

५६. सन्तों ंके पास जाने पर केवल कुतूहलवश प्रश्न नहीं ंकरने चानहए। नवनम्र भाव से उनके ननकट बैनठए। उनको ध्यान से देस्खए। नबना नकसी पूवाापेक्षा के उनकी बातें सुननए। केवल ऐसे ही प्रश्न कीनजए नजनकी आपको वास्तव में नजज्ञासा हो।

५७. केवल योग्य प्रश्न ही उनसे पूछें। उन्हें राजनीनत अथवा सावाजननक नववाद के मामलों ं में न घसीटें।

५८. सन्त के साननिध्य में ध्यान कीनजए। आपको आन्तररक प्रकाश प्राप्त होगा नजससे आपकी समस्त शंकाएँ दूर हो जायेंगी।

५९. केवल बुस्द्धमान् व्यस्क्त ही सत्संग से सत्य को समझ कर उसकी अनुभूनत कर सकता है।

सन्तों ंकी सेवा

६०. ईश्वर तक पहुँचने का सरलतम उपाय है सन्तों ंके संग ननवास तथा उनके उपदेशों ंका पररपालन।

६१. सन्तों ंकी वाणी से हृदय में सूफूनता आती है और अज्ञानजन्य शंकाएँ दूर होती हैं। उनके उपदेशों ंसे यथासम्भव लाभ उठाने का प्रयत्न करें।

६२. सन्त-कृपा के नबना नदव्य जीवन का रहस्य समझा नहीं ंजा सकता। उनके उपदेशों ं का ईमानदारी के साथ अभ्यास करके तथा उनकी व्यस्क्तगत सेवा करके आप उनकी कृपा प्राप्त कर सकते हैं।

६३. सन्तों ंकी सेवा ही मोक्ष का िार है।

६४. सन्त की सेवा का सौभाग्य प्राप्त करना बहुत ही दुलाभ है।

६५. मोक्ष की प्रास्प्त के ननकट पहुँचने पर ही साधक को सत्संग सुलभ होता है।

६६. सन्तों ंमें अहैतुकी भस्क्त रखने वाले व्यस्क्त के हृदय में भगवान् नवराजमान रहते हैं।

सन्तों ंके जीवन-चररत्र

६७. सन्तों ंकी जीवन-गाथाएँ मोक्ष-मागा में ध्रुवदशाक-यन्त्र का काम देती हैं।

६८. नजस ग्रन्थ में सन्त की जीवन-लीलाओं ंका वणान है, वह आपकी अमूल्य नननध तथा सतत नमत्र है।

६९. सन्तों ंकी जीवन-गाथाओं ंके ननरन्तर पाठ से आप भी साधु जीवन यापन कर सकेंगे। आप उनके गुणों ंको आिसात् कर लेंगे।

७०. आपके जीवन का गठन शनैः-शनैः आध्यास्िक पथ पर होने लगेगा और आप उनकी जीवन-गाथाओं ंसे पे्ररणा प्राप्त करेंगे।

७१. भगवत्-साक्षात्कार के नलए उद्यमशील बनने के नलए आपमें आन्तररक लगन होगी।

७२. महाािाओं ंऔर सन्तों ंका नचन्तन तथा ध्यान करें। इससे आपको पे्ररणा नमलेगी। वे मृत्यु को नहीं ंप्राप्त हुए। वे तो आज पूवा की अपेक्षा अनधक जीवन्त हैं।

७३. कुसंगनत से सावधान रहें। शरानबयों ंकी संगनत में पड कर संयमी व्यस्क्त भी शराब पीने लग जाता है।

७४. नजससे मन में कुनवचार उत्पन्न हो, वह कुसंग है।

७५. कुसंग बडा भयंकर है। उससे काम, क्रोध, घृणा तथा भ्रम की उत्पनत्त होती है और सूमृनत तथा नववेक-शस्क्त नष्ट होती है।

७६. कामी पुरुषों ंकी संगनत सांसाररक बन्धन का मागा प्रशस्त करती है।

१२. सतंसंग के माहात्म्य पर नहन्दू-धमाग्रन्थ

योगवानसष्

वनसष् महनषा श्री राम से कहते हैं: "इस दुस्तर संसार-सागर को पार करने के नलए सत्संग
ही नौका है। पल-भर का सत्संग भी परम कल्याणकारी होता है। महिाओं ंके दशानमात्र से सारे पाप धुल जाते हैं और हृदय प्रफुस्ल्लत होता है। पुण्यिााओं ंकी सत्संगनत से नववेक-पुष्प प्रसुफुनटत होता है। सत्संग सारी आपनत्तयों ंको दूर करता तथा अज्ञान-तरु को नष्ट करता है। सन्त जन नजज्ञासुओं ंके नलए आचरणीय ननयमों ंका नवधान करते तथा जीवन के नवनहत मागा का उपदेश करते हैं। पुण्यिााओं ंकी संगनत सन्मागा को आलोनकत करती तथा हृदय-देश के तम को नवदूररत
करती है। सत्संग माया तथा दूनषत मन पर नवजय पाने का अमोघ साधन है।

"सन्तोष, सत्संग, नवचार और शास्त्त-ये आि-साक्षात्कार के चार साधन हैं। जो इस
साधन-चतुष्टय से सम्पन्न हैं, उन्नेंने संसार-सागर को पार कर नलया है। सन्तोष सवोत्तम लाभ है,
सत्संग सवोत्तम साधन है, नवचार सच्चा ज्ञान है और शास्त्त ही सवोत्तम आनन्द है। सभी समृस्द्ध
और सफलताएँ उसकी दासी हैं, नजसमें ये साधन-चतुष्टय नवद्यमान हैं। इनमें से एक गुण के
नवकनसत होने पर अननयस्न्त्रत मन के दोष क्षीण होने लगते हैं। सद्गुणों ंके नवकास से दुगुाणों ंका
दमन और उनूमूलन होता है। इसके नवपरीत एक भी दुगुाण को प्रश्रय देने से दुगुाणों ंकी वृस्द्ध और
सद्गुणों ंका दमन होता है। हमारा मन भूलों ंका वन है नजसमें कामना की प्रबल धारा पाप और
पुण्य दो नकनारों ंके बीच वेग से बहती है।

"इसनलए हे राम ! अपने मन पर वीरतापूवाक ननयन्त्रण कीनजए तथा अपने जीवन में
आचरण के नलए उक्त चारों ंसाधनों ंके नवकास के नलए पुरुषाथा कीनजए।

"जो व्यस्क्त सतत आि-नवचार करता है, वह संसार के कष्ट और ताप से पीनडत नहीं ं
होता। उसे समदृनष्ट तथा मन का सनुतुलन प्राप्त होता है, वह सदा शान्त और प्रसन्न रहता है।
माया उसके पास फटक नहीं ंसकती। वह अमर एवं स्वयंप्रकाश आिा के ध्यान में सतत ननमग्न
रहता है।

"जब तक मनुष्य को आिज्ञान प्राप्त न हो जाये, तब तक उसे आिज्ञानपरक पुस्तकों ं का स्वाध्याय, सत्संग, साधन-चतुष्टय और सदाचार का नवकास तथा इस्न्द्रयों ंका ननयन्त्रण करना चानहए
और आि-नवचार में सतत संलग्न रहना चानहए।"

श्रीमद्भागवत

भगवान् श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं: "मैं योग, सांख्य, धमा-पालन, स्वाध्याय, तप, त्याग,
इष्टापूता, दनक्षणा, व्रत, यज्ञ, मन्त्र, वेद, तीथा, यम-ननयम आनद से वैसी सुगमतापूवाक प्राप्त नहीं ं होता जैसा नक सत्संग से, जो नक सभी आसस्क्तयों ंको नष्ट कर िालता है।

"सत्संग के िारा दैत्य, असुर, पशु, पक्षी, गन्धवा, अप्सरा, नाग, नसद्ध, चारण, गुह्यक
और नवद्याधर तथा मनुष्यों ंमें वैश्य, शूि, स्त्री, चाण्डाल आनद रजोगुणी तथा तमोगुणी प्रकृनत के
बहुत से प्राणणयों ंने मेरा परम पद प्राप्त नकया है। वष्टा ऋनष-पुत्र वृत्रासुर, प्रह्लाद, वृषपवाा, बनल,
बाणासुर, मय-दानव, नवभीषण, सुग्रीव, हनुमान्, जाम्बवान्, गजेन्द्र, जटायु, तुलाधार वैश्य,
धमाव्याध, कुब्जा, व्रज की गोनपयों,ं यक्षपनत्नयों ंऔर दूसरे लोगों ंने भी न तो वेद का स्वाध्याय
नकया, न ज्ञान के नलए महापुरुषों ंकी नवनधवत् सेवा ही की, न तो व्रत-उपवास नकये और न
तपस्या ही; नकन्तु सत्संग के प्रभाव से वे मुझे प्राप्त हो गये।

"योग, सांख्य, दान, व्रत, तपस्या, यज्ञ, श्रुनतयों ंकी व्याख्या, स्वाध्याय तथा संन्यास आनद
बडे-बडे साधनों ंके िारा भी लोग मुझे प्राप्त नहीं ंकर पाते; नकन्तु गोनपयााँ, गायें, वृक्ष, मृग,
नाग तथा मूढ़ बुस्द्ध के जीव आनद सत्संग से नवकनसत प्रेेमपूणा भाव के िारा मुझे सहज ही प्राप्त
कर कृतकृत्य हो गये। नजस समय अक्रूर जी मुझे बलराम जी के साथ मथुरा ले जा रहे थे, उस
समय गोनपयों ंको, जो नक प्रगाढ़ प्रेेम के कारण अपना हृदय मुझे अनपात कर चुकी थीं,ं मेरे
नवयोग के कारण ममाान्तक पीडा पहुाँची। मेरे अनतररक्त उन्ें अन्य कुछ भी आनन्दप्रद या रुनचकर
न था। गोनपयों ंका नप्रयतम मैं जब वृन्दावन में उनके साथ था, तब जो रानत्रयााँ उन्ोंनें पल के
समान नबता दीं,ं वे ही रानत्रयााँ मेरे नवयोग में उनके नलए युग के समान हो गयीं।ं जैसे ऋनषगण
समानध में और ननदयााँ समुि में नमल कर नाम-रूप को खो देती हैं, वैसे ही वे गोनपयााँ परम प्रेेम
के िारा मुझमें इतना तन्मय हो रही थीं ंनक उन्ें देह-गेह की, अपने सगे-सम्बन्धी की तथा अपने
पास-पडोस की सुध-बुध ही न रह गयी थी।

"उनमेंसेबहुत-सीगोनपयााँमेरेवास्तनवकस्वरूप,परब्रह्मकोनजानकर मुझे अपना
नप्रयतमयारहीसमझतीथीं;ंनकन्तुउन्ोंनेंसैकडों ंऔरसहस्रों ंकीसंख्यामेंकेवल सत्संग के
प्रभावसेमुझपरब्रह्मपरमािाकोप्राप्तकरनलया।उद्धव!इसनलएतुमनवनध-ननषेध, प्रवृनत्त-
ननवृनत्ततथासुनने-योग्यतथासुनेहुएनवषयकापररत्यागकरनीनत-ननयमों ंसेऊपर उठ जाओ।
श्रुनत-स्मृनतकी,नवनध-ननषेधकीनचन्तानकरो।समस्तप्राणणयों ंकेआि-स्वरूपमुझ एक की ही
शरण पूणा हृदय तथा परम प्रेेम से ग्रहण करो। तुम्हें नकसी से भय नहीं ं होगा।"

१३. सवा देव-ऋनष-भक्त-कीतान-माला

थार अथवा शमट्टू

भजो राधे कृष्ण भजो राधे श्याम
भजो राधे कृष्ण भजो राधे श्याम

सावाजननक कीतान

१. भजो प्रभु ईसा भजो प्रभु मोहिद
भजो खुदा खुदा भजो अल्लाह अल्लाह

२. भजो प्रभु बुद्ध भजो तथागत
भजो अहात् भजो बोनधसत्त्व

३. भजो प्रभु कन्त्यूनशयस भजो प्रभु नशन्तो
भजो प्रभु महावीर भजो प्रभु तीथंकर

४. भजो वानह गुरु भजो नानक देव
भजो गुरु अजुान भजो गुरुगोनवन्त्द

५. भजो सन्त यू सु फ
भजो सन्त फ्रांनसस
भजो सन्त मै थूयू ज
भजो शम्सतबरेज

प्राचीन ऋनषगण

१. भजो नर ऋनष
भजो नारायण ऋनष
भजो पद्मभवं
भजो वनसष् मुनन

२ भजो शस्क्त पाराशर
भजो व्यास भगवान्
भजो शुक महनषा
भजो गोनवन्दपाद

३. भजो शंकराचाया
भजो पद्मपाद
भजो हस्तामलक
भजो त्रोटकाचाया
भजो सुरेश्वराचाया
भजो सद्गुरुदेव

४. भजो अनत्र भृगु
भजो उत्स वनसष्
भजो गौतम कश्यप
भजो दुवाासा अंनगरस

५. भजो सनक सनन्दन
भजो सनतुकुमार
भजो सनतुसुजात
भजो अष्टावक्र

६ भजो याज्ञवल्क्य
भजो उद्दालक
भजो अगस्त्य
भजो नवश्वानमत्र

७. भजो कनपलमुनन
भजो पतंजनलऋनष
भजो वाल्मीनकऋनष
भजो प्रभुमनु
भजो ऋनषकणाद
भजो ऋनषजैनमनन

८. भजो प्रजापनत
भजो भरिाज
भजो प्रभु यम
भजो ननचकेता

अतीत के सन्तगण

१. भजो शंकराचाया
भजो रामानुजाचाया
भजो मध्वाचायीवर
भजो वल्लभाचाया
भजो ननम्बाकााचाया
भजो गोरखनाथ

२.	भजो सदानशव ब्रह्म भजो मधुसूदन स्वामी	भजो नवद्यारण्य भजो श्रीधर स्वामी
३.	भजो गौरांग महाप्रभु भजो रामानन्द	भजो रामप्रसाद भजो समथा रामदास
४.	भजो थयुमानवर भजो अप्पर सुन्दरार	भजो पनत्तनाथ भजो माननकवाचकर
५.	भजो नतरुवल्लुवर भजो ज्ञानसंबन्धर	भजो सुन्दरमूनता भजो कन्नप नयनार
६.	भजो त्यागराज भजो वेमन्ना	भजो पुरन्दरदास भजो पोतन्ना
७.	भजो रामनलंग स्वामी भजो तोतापुरी	भजो धन्ना भगत भजो रामकृष्ण
८.	भजो नववेकानन्द भजो साई बाबा	भजो रामतीथा भजो उपासनी बाबा
९.	भजो गोरा कुम्हार भजो चोखा मेला	भजो सेना नाई भजो रनवदास
१०.	भजो कनकदास भजो ज्ञानदेव ननजी	भजो ननवृनत्तनाथ भजो सोपानदेव
११.	भजो मुक्ताबाई भजो नामदेव	भजो एकनाथ भजो तुकाराम
१२.	भजो रघुनाथ राय भजो नत्रनलंग स्वामी	भजो मुकुन्दराय भजो पवहारी बाबा
१३.	भजो काली कमली वाला भजो तुलसीदास भजो दामा जी	भजो नवजयदास भजो कबीरदास भजो सूरदास
१४.	भजो नरसी मेहता भजो नन्दनार	भजो दादू कनव भजो पोताना

भक्तगण

१.	भजो प्रह्लाद	भजो नारद ऋनष
	भजो पराशर	भजो पुण्डरीक
२.	भजो व्यास भगवान्	भजो अम्बरीष
	भजो शुक मुनन	भजो शौनक
३.	भजो भीष्मनपतामह	भजो रुक्ांगद
	भजो नवभीषण	भजो हनुमान्
४	भजो लक्ष्मण	भजो भरत
	भजो शतुरुघ्न	भजो जटायु
५.	भजो गौरांग	भजो धु्रुव
६.	भजो चैतन्य देव	भजो ननत्यानन्द
	भजो धु्रुव उद्धव	भजो अकूरूर सुदामा

नचरंजीनव

१.	भजो अश्वत्थामा	भजो काकभुशुस्ण्ड
	भजो माकाण्ेडेय	भजो राजा बनल
२.	भजो व्यासभगवान्	भजो नारद ऋनष
	भजो हनुमान्	भजो जाम्बवान्

ऐनतहानसक महापुरुष

१.	भजो राजा जनक	भजो हररश्चन्द्र
	भजो राजा युनधनष्ठ	भजो राजा गोपीचन्द
२.	भजो राजा भतृाहरर	भजो नशस्खध्वज
	भजो राजा भरत	भजो राजा नल
३.	भजो राजा अजुान	भजो नकुल सहदेव
	भजो कणा नशनव	भजो दधीनच
४	भजो नवदुर	भजो कानलदास

भजो नशवाजी | भजो अशोक

मनहला सन्त

१. भजो कौशल्या देवी | भजो देवकी देवी
भजो यशोदा माता | भजो देवहनत

२. भजो सानवत्री | भजो नलनयनी
भजो अहल्या | भजो अनसूया

३. भजो शवरी | भजो िौपदी
भजो सत्यभामा | भजो मदालसा

४. भजो चिुाला रानी | भजो सुलभादेवी
भजो मैते्रेयी | भजो अरुन्धती

५. भजो मुक्ता बाई | भजो सकुकु बाई
भजो मीरा बाई | भजो मैत्रायनण

६. भजो कुन्ती तारा | भजो मन्दोदरी
भजो अण्डाल | भजो अन्वयार

नहन्दू देवता

१. भजो नवष्णु भगवान् | भजो पद्मनाभ
भजो प्रजापनत | भजो प्रभु नशव

२. भजो प्रभु कृष्ण | भजो प्रभु राम
भजो प्रभु गणेश | भजो कानताकेय

३. भजो प्रभु हरर | भजो मत्स्य रूप
भजो कूमा रूप | भजो वाराह

४. भजो नरनसंहमूनता | भजो प्रभुवामन
भजो परशुराम | भजो बलराम

५ भजो कस्ि अवतार | भजोदत्तात्रेय
भजो दनक्षणामूनता | भजो हररहर पुत्र
भजो िारकाधीश | भजो पण्ढरीनाथ

* * *

१.	भजो नवराट् पुरुष	भजो नहरण्यगभा
	भजो ईश महेश	भजो अन्तररक्ष
२.	भजो बृहस्पनत	भजो अयामा
	भजो वायु भगवान्	भजो नत्रशंकु
३.	भजो इन्द्र वनह्न	भजो नपतृपनत
	भजो ननऋनत	भजो वरुण यम
४.	भजो कुबेर ईश	भजो नमत्र देव
	भजो नवद्याधर	भजो यक्ष नकन्नर
५.	भजो गन्धवा	भजो नसद्ध चारण
	भजो गुह्यक	भजो नवनायक
६.	भजो अष्टवसु	भजो नवग्रह
	भजो राहु केतु	भजो सूया सोम
७.	भजो कुज बुध	भजो बृहस्पनत
	भजो शुक्राचाया	भजो शननश्चर

नहन्दू देनवयाँ

१.	भजो लक्ष्मी देवी	भजो वाणी सरस्वती
	भजो पावाती	भजो उमा गौरी
	भजो गायत्री देवी	भजो सन्ध्या देवता
२.	भजो दक्षयानी	भजो दुगाादेवी
	भजो चण्डीचामुण्डी	भजो मनहषासुरमनदानी
३.	भजो काली माता	भजो वल्ली दैवयानै
	भजो सीता जानकी	भजो राधा रुस्क्णी
४.	भजो गंगारानी	भजो कांची कामाक्षी
	भजो काशी नवशालाक्षी	भजो मदुरा मीनाक्षी
५.	भजो कात्यायनी	भजो महामाया
	भजो जगदस्म्बका	भजो अन्नपूणाा
		भजो भूनम देवी

१४. स्वाध्याय

सद्ग्रन्थों ंका अध्ययन ही स्वाध्याय है जैसे गीता, उपननषद्, रामायण, भागवत आनद। एकाग्र मन से इन सद्ग्रन्थों ंका अध्ययन करना चानहए। जो-कुछ आपने अध्ययन नकया है, उसे समझें और अपने दैननक जीवन में आचरण करने का प्रयत्न करें। यनद आपने सद्ग्रन्थों ंके उपदेशानुसार आचरण नहीं ंनकया, तो आपके अध्ययन से कोई लाभ नहीं ंहै। नाम-जप, मन्त्र का पुनः-पुनः स्मरण
स्वाध्याय के ही अन्तगात है। सद्ग्रन्थों ंका सतत अध्ययन तथा अपने दैननक जीवन में उनका आचरण करने से प्रभु-सामीप्य प्राप्त होता है।

शास्त्रों ंतथा मन्त्रिष्टा ऋनषयों ंिारा नलस्खत ग्रन्थों ंका ननत्य-अध्ययन ही स्वाध्याय है। पावन ग्रन्थों ंका पारायण अथवा ननत्य-पाठ ही स्वाध्याय है। यह राजयौनगक ननयम का चतुथा अंग है। 'मैं कौन हाँ' अथवा आि-तत्त्व का नवचार भी स्वाध्याय ही है। स्वाध्याय एक प्रकार से अप्रत्यक्ष सत्संग है।

यनद आपको जीनवत महािाओं ंका सत्संग न प्राप्त हो, तो महािाओं ंके िारा नलखे हुए सद्ग्रन्थों ंका स्वाध्याय करना चानहए। यह परोक्ष सत्संग ही है। यनद आप नववेकचूिामनण का अध्ययन करें, तो आपको उस समय भगवान् शंकराचाया के सत्संग का लाभ होगा। इसी भााँनत यनद आप योगवानसष् का स्वाध्याय करते हैं, तो आपको महनषा वनसष् का सत्संग प्राप्त होगा।

सायंकाल को चार-पााँच व्यस्क्त नकसी मस्न्दर या शान्त सथान में एकत्र हो कर गीता, उपननषद्,रामायण या भागवत का पाठ करें! इससे मन शनैः-शनैः शुद्ध होगा और आध्यास्कि पथमेंरुनचहोगी। मनहलाओं ंको भी ऐसा ही करना चानहए।

दैननक स्वाध्याय के नलए सवोत्कृष्ट ग्रन्थ

भक्तों ंको ऐसे ग्रन्थों ंका स्वाध्याय करना चानहए, नजनमें भस्क्त का आदशा प्रस्तुत नकया गया हो, भगवान् के ऐश्वया, माधुया और लीलाओं ंका वणान हो, सन्तों ंकी गाथाएँ हों ंतथा भस्क्त के नवकास के नलए साधनाएँ बतलायी गयी हों।ं ऐसे ग्रन्थों ंके स्वाध्याय से ही भस्क्त का नवकास
होता है।

भस्क्त के नवकास में ननम्नांनकत ग्रन्थ नवशेष महत्त्वपूणा हैं : रामायण, श्रीमद्भागवत, नारायणीयम्, गीता, नवष्णुपुराण, अध्याि रामायण, तुलसी रामायण (रामचररतमानस), नवष्णुसहस्रनाम, शास्ण्डल्य सूत्र, नशवपुराण, देवी भागवत, नारद पांचरात्र, भस्क्तयोग साधना, भस्क्तयोग सार, भस्क्त और संकीतान, भस्क्तरसामृतम्, अलवारों ंतथा नयनारों ंके गीत, थेवारम्, नथरुवचकम्, दासबोध, तुकाराम के अभंग, ज्ञानेश्वरी गीता, भस्क्त रसायन, भस्क्तरसामृतनसन्धु आनद।

मन का धोखा

यह ठीक है नक आप भौनतक पदार्थों के नलए लालानयत हैं; नकन्तु नफर भी आप ध्यान तथा गीता, उपननषद्, नववेकचूिामनण आनद के स्वाध्याय में एक नदन भी न चूकें। ये सभी ग्रन्थ आध्यास्मिक रत्नों से भरपूर हैं। एक श्लोक से ही आपको शास्न्त नमल जायेगी।

शहमा शवहाय कामान्यिः सवामन् िुमांश्चरशत शनस्स्पृहिः।
शनममो शनरहंकारिः स िाक्मिशधगच्छशत ।।

इसे आप कभी न भूलें।

मन आपको धोखा देता है। आप सोचते हैं: 'जब मेरे पास अपनी दो गायें होंगी, जब मसूरी में मेरा अपना एक शानदार बाँगला होगा, तभी मैं सुखी होऊँगा।' ये ननरथाक नवचार हैं। हमें तो ननचकेता-जैसे व्यस्क्त की आवश्यकता है नजसमें देश, काल और कारण से परे की ही वस्तु की कामना थी। जनक तथा िुलिा के समान संसार में रह कर भी आपमें प्रबल नपपासा, ध्यान तथा त्याग की भावना होनी चानहए। नववेकचूिामनण, आत्म-बोध, पंचदशी तथा नवचार-सागर का ननत्य ही पाठ करना चानहए। ये सभी ग्रन्थ आत्मोन्ननत में सहायक हैं। योगवानसष्ठ तो अद्वैत वेदान्त का अनत सुन्दर नवशाल ग्रन्थ है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से मनुष्य को शास्न्त नमलती है। 'ननमामो ननरहंकारः स शास्न्तमनधगच्छनत।' ऐसे ही व्यस्क्त को भगवत्कृपा प्राप्त होती है।

स्वाध्याय से लाभ

स्वाध्याय ननयनमत करना चानहए। रामायण, भागवत, योगवानसष्ठ आनद स्वाध्याय के नलए उत्तम ग्रन्थ हैं। यनद आप गीता के भावों का नचन्तन करें और उनमें अपने मन को लीन कर दें, तो यह भी एक प्रकार की ननम्न स्तर की समानध है। गीता स्वाध्याय के नलए अनुपम ग्रन्थ है। इसमें सभी वेदों का सार और योगों का तत्त्व ननननहत है। अपनी सुनवधा के अनुसार आधे घण्टे से तीन घण्टे तक प्रनतनदन इस काया में लगना चानहए। धमाग्रन्थों का स्वाध्याय नक्रयायोग अथवा ननयम है। इससे हृदय शुद्ध और मन उन्नत नवचारों से पूणा होता है।

स्वाध्याय हमारे मन को प्रेरणा देता है और आध्यास्मिकता के उच्च नशखर तक पहुँचा देता है। यह शंकाओं का समाधान करता, अपनवत्र नवचारों का मूलोच्छेदन करता तथा मन में नयी आध्यास्मिक धारा प्रवानहत करता है। इससे मन का नवक्षेप दूर होता है, एकाग्रता में सहायता नमलती है और ननम्न स्तर की सनवकल्प समानध का ननमााण होता है। स्वाध्याय हमारे मन के नलए नवचार-भूनम तैयार करता है। धमाग्रन्थों का स्वाध्याय करते समय आप उन ग्रन्थों के प्रणेता नसद्ध महापुरुषों के सम्पका में आते हैं और उनसे प्रेररत हो कर तन्मयता प्राप्त करते हैं।

महात्माओं का साक्षात् सत्संग न प्राप्त होने की दशा में स्वाध्याय ही शंकाओं का ननवारण करता है। स्वाध्याय िगमगाती श्रद्धा को स्सथर बनाता, मोक्ष की नपपासा को तीव्र बनाता तथा प्रोत्साहन और प्रकाश प्रदान करता है। वह ऐसे महात्माओं का नववरण प्रस्तुत करता है नजन्होंने

अिा-मागा प्रशस्त नकया, कनठनाइयों ंतथा बाधाओं ंका सफलतापूवाक सामना कर उन्ें दूर नकया और इस भााँनत वह नवीन आशा और नव-बल का संचार कर प्रफुस्ल्लत करता है। वह मन को सत्त्व से आपूररत करता, उसमें प्ेरेरणा भरता और उसे उन्नत बनाता है। वह ध्यान और धारणा में सहायता पहुाँचाता है। वह नयी सास्त्त्वक प्रणाली नननमात करता है और मन को इस नयी प्रणाली में संचानलत करता है।

महािाओं ंके ग्रन्थों ंमें नदये गये उपदेशों ंको चररताथा करने से शारीररक क्लेश का शमन होता, आहत अिा के घाव भरते तथा जीवन के अज्ञान-जन्य सभी प्रकार के दोषों ंसे रक्षा होती है। आध्यास्त्मक ग्रन्थ सभी परेशाननयों ंमें सान्त्वना देने वाले साथी का, सभी कनठनाइयों ंमें आदशा नशक्षक का, अज्ञान-ननशा में पथ-प्रदशाक प्रकाश का, बुराइयों ंमें रामबाण औषनध का काम करता है और मनुष्य के भाग्य का ननमााण करता है।

साधु-सन्तों, ंदाशाननकों ंऔर तत्त्वज्ञाननयों ंके ग्रन्थों ंको आिसात् कर ज्ञान प्राप्त कीनजए। इस ज्ञानाजान से नवज्ञान के सभी रहस्यों ंको जाननए, वसुतुओं ंके प्रकृत स्वरूप को पहचाननए, अपने ननज-व्यस्क्तव को प्रभु के स्वरूप में तदाकार कीनजए। ज्ञान ही शस्क्त और आनन्द के प्राचुया की कुंजी है। ज्ञान असंख्य तापों ंको दूर करता, असंख्य पापों ंको नवनष्ट करता, अनवद्या-ग्रस्न्थ का उचे्छेदन करता और शास्न्त, सौमनस्य तथा अशेष पूणाता प्रदान करता है।

परररनशष्ट

१. सतं्संग तथा गुरु-भस्क्त का महत्त्व

'सतं्संग' तथा 'गुरु-भस्क्त' दोनों ंनवषय परस्पर सम्बद्ध हैं; क्ोंनक आध्यास्त्मक गुरु के प्रनत भस्क्त ही, एक प्रकार से, सतं्संग का नवनशष्ट रूप-नवनशष्ट तथा घनीभूत रूप है।

महािा के साथ सतं्संग तथा गुरुदेव के साथ सतं्संग

पनवत्र महािाओं ंका संग ही सतं्संग है। सतं्संग नकसी सन्त की, नकसी पुण्यािा, महािा अथवा नकसी भगवद्भक्त की संगनत है। यह सतं्संग का सामान्य अथा है और इन मायनों ंमें सतं्संग क्षनणक भी हो सकता है। उदाहरण-स्वरूप यात्री यात्रा के नलए आते हैं। कुछ लोग अवकाश के समय तीथा-यात्रा करने ननकलते हैं। उस समय वे इन तीथा-सथानों ंमें सन्त-महािाओं ंकी उपस्स्थनत का लाभ उठा कर उनके दशान करते और उनके सतं्संग से कृताथा होते हैं। यह क्षनणक सतं्संग हुआ; परन्तु जब कोई साधक नकसी सन्त के पास सतं्संगाथा उपस्स्थत होता है और कालान्तर में उस सन्त के साथ सथाई सम्बन्ध में बंध जाता है, उस सन्त को अपने TH आध्यास्त्मक मागा-दशाक गुरु के रूप में अपनाता है, तब यह सतं्संग का नवशेष रूप है। यह सथाई होता है। अब वह साधक उस सन्त को एक पुण्यािा तथा परम भागवत के रूप में मानने और सिान देने के साथ-ही-साथ उसके प्रनत नवशेष श्रद्धा प्रदनशात करता है। उसका यह भाव पूजा-अभ्यथाना का रूप ले लेता है। यह गुरु-पूजा, नवशेषकर भारत में, ईश्वर-पूजा के समकक्ष मानी जाती है; क्ोंनक नजस व्यस्क्त की सहायता से साधक मोक्ष-लाभ करना चाहता है, उसके प्रनत ईश्वरव की भावना

का होना परम आवश्यक है। यह उस सन्त (गुरु) और साधक(नशष्य)केपारस्पररकसम्बन्धका बहुत ही गहन एवं महत्त्वपूणा अंग है। अतः जब यह सम्बन्धनकसीसतुपुरुषकेसाथसथानपतहोता
है, तभी साधक उत्कट भस्क्त, पूणा आिापाण और आि-त्यागकीउदात्तभावनासेअनुप्रानणतहो कर सत्संग करता है, वह अपने ननज-अस्स्तव को, व्यस्क्तवकोखोदेनेकाप्रयत्नकरताहै।

गुण-ग्राहकता से ही सत्संग में लाभ

नकसी सन्त के पास जाने पर इस भावना का-गुण-ग्राहकता का-होना आवश्यक है, तभी वह सन्त के सानन्नध्य का लाभ उठा सकता है। यनद आप नकसी सन्त के पास जाते हैं और यनद उनके ज्ञान से कुछ लाभ उठाना चाहते हैं, उनसे कुछ प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको
ग्रहणशील होना होगा। यह ग्रहणशीलता आध्यास्कि जगत् में ही नहीं,ं व्यावहाररक जगत् में भी
उतनी ही आवश्यक है। कल्पना कीनजए नक आप नकसी बडे नविान् से कुछ सीखना चाहते हैं। यनद आप यह कहें नक 'मैं तो सब-कुछ जानता ही हाँ, तब स्वभावतः ही आप उस नविान् की
बातों ंपर ध्यान नहीं ंदेंगे। इस भाँनत यनद आप नकसी प्रकाण्ड नविान् के पास भी जायें, तो भी आप नजन नवचारों ंके साथ उसके पास गये थे, उन्हीं ंनवचारों ंके साथ वापस आ जायेंगे। आप जैसे पहले थे वैसे ही बने रहेंगे। उस सन्त में नजन गुणों ंकी रानश है, उसमें से आप नंकंनचन्मात्र भी प्राप्त नहीं ंकर सकेंगे; क्ोंनंक आप यह अनुभव ही नहीं ंकरेंगे नक 'मुझमें कुछ कमी है, कुछ
अभाव है। उस सन्त में वे गुण प्रचुर मात्रा में हैं; अतः मैं उसके पास जाऊँ।' ज्ञानी के पास जाने
वाले व्यस्क्त के मन में जब तक यह भावना नहीं ंहोती, तब तक वह गुण ग्रहण नहीं ंकर सकता।
यनद दूसरा व्यस्क्त उदारतापूवाक ज्ञानदान की भावना से देने को उतुसुक भी है, तो भी वह व्यस्क्त
खाली हाथ ही वापस आ जाता है, उसके हाथ कुछ भी नहीं ंलगता, क्ोंनंक उसमें पात्रता जो नहीं ंहै। जब सामान्य लोगों ंसे नमलने में गुण-ग्राहकता की इतनी आवश्यकता है तो ऐसे सन्त से,
नजसे आप गुरु-रूप में वरण करना चाहते हैं, नमलने पर इस गुण की नकतनी अनधक आवश्यकता
होगी, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। सन्त के साथ सत्संग अन्ततः नशष्यव का रूप धारण करता है-सन्त गुरु बनता है और साधक गुरु के पादपद्म में बैठने वाला नशष्य।

गुरु-नशष्य के सम्बन्ध का आधार

नहन्दू-अध्यिा-जगत् में गुरु-नशष्य-सम्बन्ध जो इतना महत्त्व रखता है, आस्खर उसका
आधार क्ा है? मैं आपको स्मरण रखने के नलए तीन शब्द बतलाता हाँ। यनद आप इन्हें स्मरण रखेंगे, तो आप आध्यास्कि जीवन के इस महत्त्वपूणा पहलू में ननननहत आध्यास्कि मनोनवज्ञान की यसं्त्ंकनचत् झाँकी पा सकेंगे। उनमें से प्रथम शब्द है 'उपननषद्', नितीय है 'उपासना' तथा तृतीय
है 'सत्संग'।

उपननषद् शब्द की ननष्पनत्त कैसे हुई है? इसका अथा है 'पास बैठना - ऐसे व्यस्क्त के
पास बैठना जो नक ज्ञानी है, नजससे हम वह ज्ञान प्राप्त कर सकें नजससे उसका जीवन ज्योनतत
हुआ है। अतः इसका अथा हुआ-पूणा पुरुष अथवा ऋनषयों ंके पास बैठना और उनसे नवनम्रतापूवाक
वह ज्ञान प्राप्त करना। यह वह ज्ञान है नजसे नजज्ञासुओं ंने भस्क्त, ग्रहणशीलता और नवनम्रता के
साथ ऋनषयों ंके चरणों ंमें बैठ कर प्राप्त नकया था और ज्ञानवान् बने थे। उपननषद् का भाव यही
है नक जो ऋनष के पास बैठ कर सीखा जाये।

उपासना का अथा भी प्रायः यही है। जहााँ उपननषद् शब्द ज्ञान-प्रास्प्त की नवनध के रहस्य की कुंजी बतलाता है, ज्ञानाजान की प्रनक्रया बतलाता है वहााँ उपासना शब्द से ईश्वर की भस्क्त या ईश्वर-पूजा का भाव व्यक्त होता है। उपासना का अथा है भगवद्-पूजा और संसूकृत में इसका शास्ब्दक अथा है 'ननकट बैठना'। इसका भाव हुआ-पास बैठना, अपने इष्टदेव के ननकट बैठना। यह उपासक को उसके आराध्य देव के साथ, नजससे वह ज्ञान प्राप्त करना चाहता है, ननकट-सम्पका सथानपत करने की आवश्यकता प्रकट करता है।

सत्संग शब्द भी थोडे-बहुत रूप में यही अथा व्यक्त करता है। इसका अथा है-सत्य के साथ संग और उसी प्रकार उनके साथ संग नजन्ोंनें परम सत्य के साथ अपनी चेतना को एकाकार कर नदया है अथवा जो स्वयं स्िूप बन चुके हैं। **'ब्रह्मशवद् ब्रह्मैव भवशत'** - ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है। अतः साधु-सन्त और ज्ञानी पुरुष भी सत्य के मूता रूप, सत्य के ही प्रकट रूप हैं नजसमें उनकी चेतना सदा प्रनतनष्त रहती है। अतः जब आप सत्संग में सस्नलत होते हैं, तो इसका अथा है नक आप उस समय परब्रह्म के पास ननवास करते हैं, नजसका रूप वह सन्त है।

उपननषद्, उपासना तथा सत्संग-ये तीन ही हमारे आध्यास्कि जीवन के प्रमुख आधार रहे हैं। अपनी आध्यास्कि संसूकृनत के मूल स्रोत में, इसके सवोच्च नशखर पर हम उपननषद् को पाते हैं। प्ेरेम के क्ेषेत्र में हमारे पास उपासना है। सत्संग आज के युग में, इस कनलयुग में आध्यास्कि साधना का एक नवशेष रूप है। कहते हैं नक कनलयुग में सबसे महान् तथा संसार-सागर को सन्तरण करने का यनद कोई अचूक साधन है; तो वह है सत्संग। सत्संग को, नवशेषकर इस कनलयुग में, बडा महत्त्व नदया गया है, क्ोंनक इस दृश्य जगत्-रूप सागर से जीव को पार ले जाने के नलए एकमात्र यही नौका है। कहते हैं नक नाम और सत्संग ही दो नवषय हैं नजन पर मानव की आशाएँ नटकी हैं। इस कनलयुग में साधक की आशाएँ उसके आध्यास्कि जीवन की आधारनशलाएँ इन नाम और सत्संग-रूप दो स्तम्भों ंपर नटकी हुई हैं। उपननषद् से आरम्भ हो कर बाद में उपासना का रूप लेती हुई यह साधना सांसाररक जीवन-क्ेषेत्र में सत्संग के रूप में ही नवद्यमान है। सत्य-लोक की ओर प्रयाण करने में साधकों ंके नलए सत्संग बहुत ही महत्त्वपूणा है।

उनचत दृनष्टकोण का महत्त्व

अब प्रश्न यह है नक जब आध्यास्कि चेतना के प्रकटीकरण के नलए सत्संग ही सवोच्च कारण है, तो गुरु के पास जाने वाले प्रत्ेयेक साधक को एक-सा ही प्रकाश, एक-से ही प्रकाश के लक्षण तथा योग-पथ में साधना का एक-सा ही फल क्ों ंनहीं ंप्राप्त होता? भगवान् कृष्ण ने िापिर युग में अवतीणा हो कर अपनी अलौनकक लीलाएँ कीं।ं वे परात्पर ब्रह्म के पूणा अवतार थे। जो लोग उनके साथ रहते थे, उनसे नमलते-जुलते थे, उनसे बातें करते थे, उनसे सभी प्रकार के व्यवहार करते थे, उनमें से कुछ लोग ऐसे थे जो उनके नदव्य स्वरूप को भली-भााँनत जानते थे और वे ही भाग्यशाली बने। उनमें से कुछ लोग ऐसे भी थे नजनमें कोई भी पररवतान न आया। वे सब उस युद्ध में मारे गये, नजसकी रचना भगवान् कृष्ण ने स्वयं की थी। वह अद्भुत वसुतु क्ा है? एक शब्द में कहें, तो वह है 'दृनष्टकोण।' जीव का दृनष्टकोण ही वह नवषय है जो यह ननणाय करता है नक साधक का सत्संग िाानुभूनत में साथाक हुआ अथवा बंजरभूनम-सा ननरथाक। जब

कौरव भगवान् कृष्ण के पास गये, उनका दृनष्टकोण दोष-दृनष्ट का था। भगवान् के गुणों ंकी ओर से उन्होंनें अपनी दृनष्ट फेर ली थी। उनके प्रतीयमान दोषों ंकी ओर ही उनकी दृनष्ट लगी हुई थी। भगवान् अपनी योग-माया के आश्रय से सब नक्रयाएँ करते हैं और यह माया अनचन्त्य तथा अननवाचनीय प्रकृनत है। यनद हमारा ध्यान प्रकृनत पर केस्न्द्रत हो, तो ि‍ओ-ज्योनत हमसे ओझल रहती है। प्रभु ईसा का जीवन बहुत ही चमत्कारपूणा था। बहुत ही थोडे लोग ऐसे थे जो उनके गुणों ंको जान पाये तथा अमर हो गये और वे असंख्य प्राणी नवसृमृनत के गता में नवलीन हो गये नजन्होंनें उनको शूली पर चढ़वाया। उन लोगों ंने उनमें एक राजनीनतक क्रास्न्तकारी का रूप देखा, एक जादू वाले को पाया, शैतान का साथी समझा। यही दृनष्टकोण था उन असंख्य लोगों ंका, अतः उन्हें ईसा का सत्संग-लाभ न हुआ। उनके नलए सत्संग था ही नहीं।ं इस भाँनत प्राणी का दृनष्टकोण ही सत्संग से होने वाले लाभ का ननणाय करता है। हमारे सामने दुयोधन के दृनष्टकोण का ऐनतहानसक उदाहरण है। महनषा व्यास ने महाभारत में एक उदाहरण िारा दुयोधन और युनधनष्ठ के व्यस्क्तव के गठन को व्यक्त नकया है।

युनधनष्ठ और दुयोधन का ऐनतहानसक उदाहरण

भगवान् कृष्ण ने दुयोधन और युनधनष्ठ को एक काम सौंपा। युनधनष्ठ को काम सौंपते हुए उन्होंनें कहा नक 'तुम जाओ और एक ऐसे व्यस्क्त को ढूँढ़ लाने की कोनशश करो जो नबलकुल दुष्ट हो, नजसमें गुणों ंका सवाथा अभाव हो और जो दोषों ंसे पूणा हो।' उन्होंनें दुयोधन को अलग बुला कर आदेश नदया नक 'तुम ऐसा व्यस्क्त खोज कर लाने का प्रयत्न करो जो सद्गुणों ंसे पूणा हो, नजसमें एक भी दोष न हो।' वे दोनों ंअपने काम पर चले गये और कुछ नदनों ंके बाद दोनों ंही वापस आये तथा श्रीकृष्ण से अलग-अलग नमले। श्रीकृष्ण ने प्रत्येक से यही प्रश्न नकया : "तुम वापस आ गये? क्ा नजस व्यस्क्त को खोजने गये थे, उसे ले आये? वह कहाँ है?" अब उनके उत्तर सुननए। दुयोधन कहता है: “मैंने ऐसे व्यस्क्त की, जो सद्गुणों ंसे सम्पन्न हो और नजसमें दुगुाणों ंका सवाथा अभाव हो, खोजने का अथक पररश्रम नकया, सवात्र ही उसे छान मारा; नकन्तु ऐसा व्यस्क्त कहीं ं भी न नमल सका जो सवाथा ननदोष हो । प्रत्येक व्यस्क्त में दोष भरे हुए हैं। यनद नकसी व्यस्क्त में एक गुण है, तो उसमें दरजनों ंदोष भी हैं। पूरी खोज-बीन के बाद मैंने पाया नक यनद कोई व्यस्क्त ऐसा है नजसमें कोई भी दोष न हो, तो वह मेरे अनतररक्त अन्य कोई नहीं।ं मैं ही वह व्यस्क्त हाँ। अतः मैं आपके पास आया हाँ। अब आप जैसा चाहें, मेरे साथ करें।" श्रीकृष्ण मुस्कराये और कहने लगे-"बहुत ही अच्छा हुआ। सवागुण-सम्पन्न तथा दोष से सवाथा मुक्त व्यस्क्त के दशान कर मुझे बडी प्रसन्नता हुई।"

युनधनष्ठ के आने पर श्रीकृष्ण पूछते हैं: "तुम्हारा व्यस्क्त कहाँ है?" युनधनष्ठ ने जो उत्तर नदया वह अमर हो गया। उसमें मानव की अनभव्यस्क्त है। वह कहते हैं: "हे प्रभु! ननकृष्टतम पानपयों ंमें भी, संसार नजन व्यस्क्तयों ंको सबसे अनधक बुरा बताता है, उनमें भी मैंने अनुकरणीय गुण पाये, उनमें भी श्रेष्ठ लक्षण पाये। अतः यथाशक् प्रयत्न करने पर भी मैं ऐसा व्यस्क्त पाने में सफल न हो सका जो दोषों ंसे ही पूणा हो। प्रत्येक व्यस्क्त में कुछ-न-कुछ सद्गुण होते ही हैं। दोष से पूणा व्यस्क्त नमलना असम्भव है। मैंने अपना नवश्लेषण नकया और पाया नक मैं दोषों ंसे, अपूणाताओं ंसे तथा पापों ंसे इतना भरा हुआ हाँ नक मैं आपके समक्ष उपस्स्थत करने के नलए अपने से अनधक उपयुक्त व्यस्क्त नहीं ंपा सका। केवल मैं ही वह व्यस्क्त हाँ नजसमें आपका बतलाया हुआ नववरण पूणा रूप से घनटत होता है। अतः मैंने अपने-आपको आपके सम्मुख प्रस्तुत नकया है।”

दोष-दृनष्ट का सदुपयोग और दुरुपयोग

दृनष्टकोण के ये उपयुाक्त दो रूप हैं। युनधनष्र का दृनष्टकोण साधक का दृनष्टकोण था। उनमें दोष ढूाँढ़ने की प्रवृनत्त बनहगाामी न हो कर अन्तमुाखी थी। दोष-दृनष्ट मानव का एक भयंकर अनभशाप है। यह सावालौनकक है; परन्तु साधकों ंकी एक नवशेष श्रेणी है। वे बहुतों ंमें से एक नहीं ंहैं, वरन् उनका वगा ही पृथक् है जो स्वयं को सुधारने पर बल देते हैं, संसार को सुधारने का नहीं, ं जो अिा-नवश्लेषण को महत्त्व देते हैं और अिा-सुधार के नलए प्रयत्नशील हैं, संसार के नवश्लेषण में नहीं ंपडते; क्ोंनंक इसका दोष ढूाँढ़ने के नलए सहस्रों ंजन्म भी पयााप्त नहीं ंहैं। नववेकी पुरुष के नलए तो संसार अपूणाताओं ंका आगार है। पूणाता तो केवल ब्रह्म में है। प्रकृनत के काया में पूणाता कहााँ! प्रकृनत तो ब्रह्म के नवपरीत है। यनद ब्रह्म सवातोभावेन पूणा है, तो प्रकृनत अपूणाताओं ंकी खान है। यनद ब्रह्म प्रकाश है, तो प्रकृनत अन्धकार। प्रकृनत का जगत् तो अपूणा है, सदोष है; अतः यनद हम इसके दोष ननकालने के चक्कर में पडे, तो इसके नलए सहस्रों ंजन्म भी पयााप्त न होंगें। अतः इस शस्क्त का उपयोग अपने ऊपर ही करना चानहए। तभी आपके जीवन में आकांनक्षत पररवतान घनटत होगा। आपको अपना जीवन सुधारने तथा उसे पररषृ्कत बनाने के नलए असीम क्षेत्र खुला हुआ नमलेगा। नकनु्त यनद इस शस्क्त का उपयोग बाहर नकया गया, तो आपके नलए यह समस्त जगत् दोषों ंका नशक्षक बन जायेगा; क्ोंनंक नजस नवषय पर आप मन को सदा एकाग्र करते हैं, वही आपके व्यस्क्तत्व का आधार बन जाता है। नजस नवषय का काल्पननक नचत्र आपके मन में होता है, आपका व्यस्क्तत्व उसी से पोषण प्राप्त करता, बढ़ता और उसी के अनुरूप नवकनसत होता है। यह एक मनोवैज्ञाननक तथ्य है। यनद आप सदा पूणाता के नवषय में, सौन्दया और शास्न्त के नवषय में नचन्तन करें तो पूणाता, सौन्दया और शास्न्त के अनुरूप ही आपका नवकास होगा। यनद आप अपने समक्ष अपूणाता, कुरूपता और उदासी के नवचार बनाये रखें, तो आपको प्रत्येक वसु्त वैसी ही नदखायी पडेगी। यनद आप नहमालय की भयंकर शीत का ही नचन्तन करेंगे, तो आप बफा का सौन्दया खो देंगे। यनद राका-शनश की सुषमा का दशान करते समय आप चन्द्रमा के दूसरे पक्ष का, उसके घोर कानलमा-वृत्त का मन में नचन्तन करते रहें, तो आपके मन और हृदय-पट पर पूणा चन्द्र की आभा के सथान में कानलमा ही रहेगी। दोष-दृनष्ट की यह प्रकृनत बहुत बडी बाधा है, क्ोंनंक वह साधक को उसकी ननम्न प्रकृनत से, दोषपूणा प्रकृनत से सदा बााँधे रखती है और वह अपने गुरु के चरणों ंमें भी, योग के पनवत्र क्षेत्र में भी, शुद्ध आध्यास्िक पथ में भी अपनी उस प्रकृनत को ले जाता है नजसने उसे नवषय-वासना-मय सदोष जीवन में बााँध रखा है और यनद ऐसा मन योग के पावन क्षेत्र में ले जाया गया, तो प्रकाश प्राप्त करने के सथान में वह अन्धकार का आनलंगन करेगा; क्ोंनंक वह अपनी प्रकृनत के बन्धन में बंध चुका है तथा उससे मुक्त होना नहीं ंचाहता और आपको मालूम है नक इसका पररणाम क्ा होगा ? गुरु की ज्योनत, योग का प्रदीप उसके अन्तनथात दोष-दृनष्ट-रूपी अभेद्य दीवार के कारण उसके हृदय को प्रकानशत न कर सकेगा। इस संकट से बचने के नलए ही प्राचीन काल के ऋनषयों ंने यह उपदेश नदया था :

"यस्य देवे िरा भक्तयमथा देवे तथागुरौ।
तस्यैते कशथता ह्यथामिः प्रकिो महात्मनिः।।"

(श्वेताश्वतरोपननषद् : ६-२३)

नजस साधक की परमदेव परमेश्वर में परम भस्क्त होती है तथा नजस प्रकार परमेश्वर में होती है, उसी प्रकार अपने गुरु में भी होती है, उस महिाा-मनस्वी पुरुष के हृदय में ही शास्त्रों ं के रहस्यमय अथा प्रकानशत होते हैं। इसनलए इस दोष-दृनष्ट की भयंकर भूल से बचने के नलए, गुरु के सनन्नकट जाते समय साधक में गुरु के प्रनत पूणा श्रद्धा और भस्क्त का होना एक अपररहाया पूवाापेक्षा माना गया है। यनद यह दोष दूर कर नदया गया, यनद साधक और नसद्ध के बीच की लौह दीवार हटा दी गयी, तो नशष्य पर गुरु की कृपा प्रवानहत होने लगती है। यनद आप एक

पाषाण-खण्ड को सहस्रों ंवषा तक जल में िुबोये रखें, नफर भी आप अन्त में यही देखेंगे नक वह पाषाण-खण्ड सहस्रों ंवषा पूवा का पाषाण-खण्ड ही बना रहा। लाखों ंमन जल जो उस पर बह चला, उससे उसमें कुछ भी पररवतान घनटत नहीं ंहुआ; क्ोंनक उसने जल से अपने को पूणात: अभेद्य बना रखा था। साधक का भी यही स्वभाव होता है। वह अपने सीनमत ज्ञान और स्वल्प व्यस्क्तत्व से ही सन्तुष्ट रहता है, वह अपनी राजनसक वृनत्त के कारण अपनी ही पूवा-कस्ल्पत भावनाओं ंसे, अपने ही नवचारों ंसे नचपके रहना चाहता है और उसका यह स्वभाव ही सत्संग के उच्चतम सत्-दशान में प्रनतफनलत होने में महान् बाधा है। जब तक साधक अपने पुराने स्वभाव से दृढ़तापूवाक नचपका रहता है और अपने में पररवतान की आवश्यकता स्वीकार नहीं ंकरता, तब तक उसके नलए सतं्संग ननष्फल ही होता है। साधक को अपने दृनष्टकोण में पररवतान लाना होगा। उसे यह स्वीकार करना होगा नक 'मैं अल्पज्ञ हाँ, गुरुदेव मुझसे अनधक ज्ञानवान् हैं। मेरा ज्ञान स्वल्प है और जो मैं नहीं ंजानता हाँ, वह सन्त मुझे प्रदान करेंगे।' सतं्संग के फलद होने के नलए इस प्रकार का दृनष्टकोण अपनाने की परम आवश्यकता है।

अहं और उसका नवनाश

अब हम धमाशास्त्रों ंके आध्यास्त्मक ज्ञान के मूल में ही प्रवेश करते हैं। ज्ञानयोग क्ा है? भस्क्तयोग क्ा है? कमायोग क्ा है? राजयोग क्ा है? आध्यास्त्मक साक्षात्कार तथा मोक्ष के इन समूपूणा प्रश्नों ंका मूल अनवद्या के नसद्धान्त में ननननहत है। ज्ञानी जन कहते हैं नक अज्ञान ही सबका मूल है। अब प्रश्न यह है नक जीव में यह अज्ञान नकस प्रकार व्यक्त होता है? इसका उत्तर है अहंकार के रूप में। इस भााँनत जीव का 'अहं' ही उसकी सारी समस्याओं ंका मूल कारण है; इस 'अहं' को नमटा देने पर जो अपनी पूणा आभा के साथ नवभानसत हो उठता है, वही है आपका स्वरूप, वही है सस्च्चदानन्द। इस 'अहं' का नवनाश ही सभी योगों ंका प्रमुख लक्ष्य है। मैं कब मुक्त बनूाँगा? जब 'मैं' का अस्स्तत्व जाता रहेगा। जब अहं-भावना जाती रहती है, तब 'मैं-पन' और 'मेरा-पन' पूणात: नवनष्ट हो जाता है और जीव मोक्ष प्राप्त कर लेता है। नजस प्राणी में 'मैं' की भावना का पूणा नाश हो जाता है, वह उसी क्षण कैवल्य मोक्ष प्राप्त करता है। उसे उन्नत क्षेत्र में जाने की आवश्यकता नहीं ंपडती। उसे सद्यः मोक्ष प्राप्त हो जाता है। आत्मज्ञान में अहं-भाव ही बाधक है और यह अहं-भाव नवनभन्न रूपों ंमें प्रकट होता है। यह अज्ञान के रूप में, देहाध्यास के रूप में प्रकट होता है, 'मैं यह शरीर हाँ', 'मैं मन हाँ', 'मैं इस्न्द्रय हाँ।' पूणा आत्मा को शरीर, प्राण, मन और इस्न्द्रय समझने की गलत धारणा को अध्यास कहते हैं। अत: अपने को सवाव्यापी परम सत् मान कर इस अध्यास को दूर कीनजए। 'मैं आत्मा हाँ' - इस नवचार को अपने मन में पुनः पुनः बैठाइए। यही वेदान्त की प्रनक्रया है। अत: अध्यास-रूप में वतामान अपने अहं को नष्ट कीनजए।

यहअहंकार कभी-कभी राग (यह मेरा है, मम, मम इनत) आनद के रूप में अनभव्यक्त होताहै।राग-रूप में अनभव्यक्त इस अहंकार के उनूमूलन के नलए सन्तों ंने बतलाया है नक 'प्रभु सेरागकीनजए।' यह पे्रेम-मागा है।

त्वमेव मातिाशिताात्वमेव
त्वमेव िनुधुश्चसखात्वमेव।
त्वमेव शवद्याद्रशवणंत्वमेव
त्वमेव सवंममदेवदेव।।

'प्रभु आप ही मेरे सवास्व हैं। इस संसार की नकसी भी वसुतु में मेरी आसस्क्त नहीं ंरही। आप ही मेरे अपने हैं, मेरे ननकटतम और नप्रयतम हैं। आपमें मेरा मन उलझ गया है।' राग, पे्रेम और िेह के रूप में अनभव्यक्त अहं-भाव का यही पररशोधन है।

यही नहीं,ं यह अहं-भाव मनुष्य के व्यस्क्तव में दूसरे रूप में- अहंकार, अनभमान, अिो-प्रशस्स्त के रूप में-भी पाया जाता है। 'मैंने वह काम नकया। मैं वेदों ंका पस्ण्डत हाँ। मैं उस नवज्ञान में पारंगत हाँ।' यह सब उसके कुछ रूप हैं। मनुष्य हर बात में अनभमान करता है और इस भावना को प्रश्रय देता है, 'मैं ही कताा हाँ। मेरे पास सब-कुछ है।' इस अनभमान को नष्ट कीनजए। 'मैं कुछ नहीं ंहाँ। मैं कुछ भी नहीं ंकरता। सब-कुछ प्रभु ही कर रहे हैं। हरर ही करता है। प्रभु की शस्क्त से ही सब-कुछ हो रहा है। मैं तो नननमत्तमात्र हाँ।' भगवती गीता का कथन है, "नननमत्तमात्रं भव सव्यसानचन्।" यह कताापन और आसस्क्त से रनहत हो कर कमा करने का ननदेश देता है। इसनलए प्रभु के पादपद्मों ंमें पूणा अिो-समपाण करके यह मानते हुए नक 'मैं कताा नहीं ंहाँ, मैं तो नननमत्तमात्र हाँ। सब-कुछ प्रभु ही कर रहे हैं', संसार-क्षेत्र में कमा कीनजए। यही कमायोग है।

इस भााँनत ज्ञानयोग अध्यास-रूप में अनभव्यक्त अहं को दूर करता है, भस्क्तयोग भावुकता और राग के रूप में अनभव्यक्त अहं का पररष्कार करता है और कमायोग अनभमान रूप में अनभव्यक्त अहं को नष्ट करता है। नफर राजयोग से क्ा लाभ है? अहं की इन सभी अनभव्यस्क्तयों ं का मूल कारण है मन; अतः इस मन को ही नष्ट करना चानहए। मन इस बाह्य धरातल पर प्रथमतः नकस प्रकार प्रकट होता है? अवचेतन मन अव्यक्त संस्कारों ंसे भरा हुआ है; अतः आप वहााँ प्रवेश नहीं ंकर सकते हैं। नफर मन का वह प्रमुख रूप कौन-सा है जो इस बाह्य धरातल पर प्रकट होता है? वह है सचेतन मन, वृनत्त, नवचार, संकल्प-नवकल्प। अन्तःकरण में संस्कार-रूप में गुप्त रूप से स्सथत सूक्ष्म वासना नवचार के रूप में प्रकट होती है। ज्यों-ंही मन में नवचार उठे, उसे उखाड फेंको। उसे तुरन्त ही नष्ट कर दो, कुचल िालो। 'योगनश्चत्तवृनत्तननरोध:' - नचत्त की वृनत्तयों ंका ननरोध ही योग है। मन में उत्पन्न होने वाले सभी नवचारों ंको पूणातः नष्ट कर िालो; नकनुतु यह पूणा धारणा और गहन ध्यान से ही सम्पन्न हो सकता है। मन में नाना प्रकार के नवचार उठते रहते हैं। एक-एक कर उनकी संख्या कम करते जाओ, वासना के क्षेत्र को छोटा करते जाओ और नफर उनमें से एक नवचार को, प्रमुख नवचार को ले लो और अन्त में उस नवचार को भी त्याग दो। मन ही अध्यास, ममता, राग, अनभमान आनद अहंकार के नवनभन्न रूपों ंके प्रकटीकरण का क्षेत्र है और यह राजयोग उस मन को पूणा रूप से नवनष्ट करने की एक तकनीक

है। जब मन नवनष्ट हो जाता है, तो अहं भी जाता रहता है। यही वास्तनवक राजयोग है। आसन, प्राणायामानद तो धारणा तथा ध्यान के नलए केवल तैयारी-स्वरूप हैं।

अतः इन सभी नवषयों ंसे यह महत्त्वपूणा तथ्य प्रकट होता है नक अहं ही मानव का शतुरु है। अपनी असंख्य शाखा प्रशाखाओं ंके साथ यह अहंकार ही मनुष्य का महान् शतुरु है। मनुष्य को अज्ञान और संसार से आबद्ध बनाये रखने वाला अन्य कुछ नहीं,ं केवल अहंकार है जो नवनभन्न नवकारों ंका मूल कारण है। योग की सभी शाखाओं ंका अस्न्तम लक्ष्य इस अहंकार का मूलोचे्छेदन है और यह सत्संग से ही सम्भव है। सत्संग एक अद्भुत तकनीक है और यनद साधक ने इसकी महत्ता को भली-भाँनत समझ नलया है, तो सत्संग में महत्तर व्यस्क्तव के प्रभाव से अहंकार के मूलोचे्छेदन की मूल प्रनक्रया स्वयमेव चानलत हो जाती है। योग का अथा है अहंकार के सभी रूपों ं को पूणातः चकनाचूर कर उसे नवदूररत करना। इस बात से पररनचत यनद कोई साधक नकसी गुरु के पास जाता है तो आपको मालूम है नक वह क्ा करता है? वह सदा सावधान रहता है नक उसका अहं कभी अपना नशर न उठाये। वह अपने अहंकार के साथ नचपके रह कर भी गुरु के सनन्नकट जाने की भयंकर भूल नहीं ंकरता है।

एक दृष्टान्त

एक कथावाचक की कहानी आती है। वह वषा-भर दरबार में कथा नकया करता था। एक बार राजा को भव-बन्धन से मुक्त होने की तीव्र लगन हुई। उसने सोचा नक 'यह कथावाचक मुझे भव-बन्धन से मुक्त करने में समथा होगा। मुझे माननसक शास्न्त नहीं ंहै। सम्भव है, वह मुझे कुछ ज्ञान दे।' दूसरे नदन राजा ने कथावाचक से कहा: "मुझे ज्ञान चानहए। इस भव- बन्धन से मुक्त होने का रहस्य मुझे बतलाइए।" कथावाचक भय से काँप उठा। वह नंकंकताव्यनवमूढ़ हो गया। उसे कुछ समझ में नहीं ंआता था नक इस नवषम पररस्स्थनत में क्ा करे। राजा ने कहा : "यनद आप मुझे संसार से मुक्त नहीं ंकर सकते, तो आपकी नौकरी जाती रहेगी और उसके साथ ही आपका नशर भी धड से अलग कर नदया जायेगा।" कथावाचक उदास मन से अपने घर आया। उसकी एक चतुर कन्या थी। सम्भवतः वह योगभ्रष्ट रही होगी। उसने अपने नपता से पूछा : "आप इतने उदास क्ों ंहैं?" नपता ने उत्तर नदया : "मेरी बच्ची, मेरे अस्न्तम नदन ननकट आ पहुँचे हैं। राजा मुझसे असम्भव काम करवाना चाहता है। वह मुझसे वह ज्ञान प्राप्त करना चाहता है जो उसे भव-बन्धन से मुक्त कर सके। मैं भला क्ा जानता हाँ! मुझे स्वयं इस नवषय का ज्ञान नहीं ंहै। मैं तो केवल कथा करता हाँ और वह भी पररवार के भरण-पोषण के नलए ही। यनद मैं कल राजा को यह ज्ञान प्रदान न कर सका, तो वह मेरा गला उतरवा लेगा।" उसकी पुत्री ने आश्वासन देते हुए कहा : "आप कुछ नचन्ता न करें। राजा के पास जा कर ननवेदन करें नक उन्ें उत्तर नमलेगा।" कहते हैं, बूिते को नतनके का सहारा। उस कथावाचक ने कहा : "बहुत अच्छा।" आठ-दश वषा की उस लडकी ने ननवेदन नकया नक 'कल राजमहल को जाते समय मुझे भी अपने साथ ले चलें।' दूसरे नदन नपता अपनी पुत्री के साथ राजमहल में गया। कन्या ने उनसे कहा नक वह ननत्य की भाँनत ही कथा आरम्भ करें। कथा प्रारम्भ करे हुए पन्दरह नमनट भी न हुए होंगें नक उच्च स्वर के रुदन से दरबार की शास्न्त भंग हो गयी। सभी लोगों ंको आश्चया हुआ नक कौन रो रहा है। लडकी धाड मार कर रो रही थी : "मुझे छुडाइए, मुझे छुडाइए।" वह एक स्तम्भ के साथ दृढ़ता से नचपटी हुई थी। लोगों ंने उसे स्तम्भ से नवयुक्त करने का बहुतेरा प्रयास नकया; नकन्तु वे असफल रहे। वह स्तम्भ को दृढ़ता से पकडे हुए नचल्ला रही थी : "मुझे छुडाइए, मुझे छुडाइए।" राजा को क्रोध

आया। उसने कहा : "तू कैसी नादान लडकी है? तेरा आशय क्ा है? तूने स्वयं ही तो स्तम्भ को
पकड रखा है और हम लोगों ंको छुडाने के नलए कहती है।" लडकी तुरन्त ही स्खलस्खला कर हाँसने लगी। राजा ने
पूछा : "तू क्ों ंहाँस रही है?" लडकी ने उत्तर नदया: "मैं इसनलए हाँस रही
हाँ नक आप मेरे नपता जी से ठीक यही काम करवाना चाहते हैं। आपने स्वयं ही राजमहल को
पकड रखा है। आप अपने राजमहल, अपनी नवशाल सम्पनत्त और मान-मयाादा से आसक्त हैं।
नजस वसुतु को आपने स्वयं पकड रखा है, उससे ही अपने को मुक्त कराने के नलए आप मेरे नपता को आदेश देते हैं।"
राजा को कन्या के इस उत्तर से बहुत ही सन्तोष हुआ। उसे एक नशक्षा
नमली। मनुष्य को कोई दूसरा व्यस्क्त मुक्त नहीं ंकरा सकता। उसे स्वयं ही मुक्त होना है।

अहं के त्याग से ही सतं्संग की सफलता

नजस वसुतु से आप आसक्त हैं, उसे आपको छोडना होगा। अतः यह स्वयं साधक पर ननभार करता है नक वह अपनी उन आसस्क्तयों ंका पररत्याग करे जो नक ननम्न जीवन से, उसकी पुरानी असंसूकृत प्रकृनत से सम्बस्न्धत हैं। यनद वह उस आसस्क्त का त्याग करता है तो सतं्संग तत्काल ही फलप्रद होने लगता है; गुरु-भस्क्त उसके हृदय में प्रसुफुनटत होती है। इससे पूवा उससे गुरु-भस्क्त नहीं ंहोती, क्ोंनंक वह स्वयं अपने में आसक्त है, अपने ही सीनमत नवचारों ंका प्ेरेमी है, अपने ही तथाकनथत नसद्धान्तों ंका आग्रही है। वहााँ कोई नसद्धान्त नहीं ंहै। वहााँ 'तुम्हारा अपना' 'मेरा अपना' नहीं ंहोना चानहए। गुरुदेव के नवचार ही आपके नवचार हों।ं बाइनबल का कथन है : "अपने को ररक्त करो, मैं तुम्हें पूणा कर दूाँगा।" इस सिाणी का मूलाथा यह है नक अपने को अहं तथा उससे सम्बस्न्धत सभी नवषयों ंसे ररक्त करो। अहं से सम्बस्न्धत अन्य नवषय क्ा हैं? इस नवषय में शास्त्रों ंका कथन है नक वे हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सया। ये सारे नवषय अहं से संलग्न हैं। अहं चक्र की धुरी है और ये सब उसके आरे। अतः सवाप्रथम आपको अपने नसद्धान्त, अपनी ननम्न प्रकृनत से अपने को मुक्त करना होगा। आप कहते हैं, 'मेरी समझ में', नकनुतु आपकी समझ भूल-भरी समझ है; क्ोंनंक यनद साधक ने ठीक-ठीक समझ नलया है, तब तो वह सन्त बन गया होता। सभी ज्ञान सद्गुरु के श्रीचरणों ंमें अनपात कर अपने को ररक्त बनाना चानहए और यह कहना चानहए नक 'मेरे नलए जो ज्ञान आवश्यक समझते हैं, उसे आप प्रदान कीनजए।' प्रत्येेक व्यस्क्त का अपना नवचार होता है; परनुतु सज्ञान तो सद्गुरु से ही प्राप्त हो सकता है। हमें अपने अशुद्ध ज्ञान तथा अनुनचत दृनष्टकोण को दूर करना चानहए और जब तक यह अशुद्ध ज्ञान तथा अनुनचत दृनष्टकोण मन में बना रहता है, तब तक उसमें शुद्ध ज्ञान तथा उनचत दृनष्टकोण के अवतरण के नलए कोई भी सथान नहीं ंरहता। इसीनलए कहा है : **"सतं्संगते्वे शनसं्संगत्वम्।"** आपके मन में जो-कुछ है, उससे आपको ननःसंगव प्राप्त करना है। अहं का त्याग बहुत ही कनठन है। मनुष्य अपने धन का, अपनी स्त्री का, अपने सांसाररक जीवन का, अपनी सम्पनत्त का, अपने घर तथा समाज का, यहााँ तक नक सवास्व का त्याग कर सकता है, नकनुतु अपने अहं का त्याग करना उसके नलए अत्यन्त कनठन है, अतीव दुस्साध्य है; परनुतु यनद साधक सतं्संग से लाभास्न्वत होना चाहता है, यनद वह सच्चा नशष्य बनना चाहता है और गुरु-भस्क्त का नवकास करना चाहता है, तो अहं का त्याग उसके नलए आवश्यक है। अहं के त्याग के अनन्तर ही सतं्संग प्रनतफनलत होता है, वह सनक्रय होता है और तभी साधक का सत् के साथ सम्पका सथानपत होने लगता है। जो व्यस्क्त अपने इस अहं का पररत्याग करता है, उसी को सतं्संग की प्रास्प्त होती है; क्ोंनंक अपने को यह लघु अहं, यह कुषिु व्यस्क्तव मान बैठना असत्य है। नजस

क्षण वह इसका पररत्याग करता है, उसी क्षण से सत् का संग आरम्भ हो जाता है। उसके नलए सतं्संग प्रारम्भ होता है। केवल ऐसे ही व्यस्क्त के नलए गुरु-भस्क्त सम्भव है।

संके्षेपमेंसतं्संगकासारहैअपनेअहंकात्यागऔरसत्केसाथसंगप्रारम्भकरना-सत् जोहमारेअपनेअन्दरहैऔरबाह्यजगत्मेंसद्गुरुतथासन्तकेरूपमेंअनभव्यक्तहोरहाहै। जैसानकहमपहलेकहचुके हैं,सभीसन्तपरमसत्के साकाररूपहैं।अतःनदव्यजीवन यापनकरनेके नलएमनुष्यकोअपनेअहंकोमारनाहोगा।अपनेलघुअहंका,कु्षिुअहंका त्यागहीसतं्संगके फलदायीहोनेकीकुंजीहै।युनधनष्ठरमेंयहत्यागथा,राधामेंयहत्यागथा, औरईसाकेनशष्यों ंमेंभीयहत्यागथा;नकनु्तुनजनमेंयहत्यागनहीं ंहै,वेभलेहीइनअवतारी पुरुषों ंके साथरहें,उनें्इससेनकसीफलकीप्रास्प्तनहीं ंहोगी,क्ोंनंकवेअपनेकु्षिुअहंकी संगनत में ही रहते हैं।

–स्स्वामीशिदानन्द

२. स्वाध्याय की आवश्यकता

प्रश्न यह है नक जब सत्य को एक ही वाक्ांश 'तत्त्वमनस' (तू वही है) में भली-भााँनत प्रकट कर नदया गया है, तब आध्यास्त्मक नवषयों ंपर अनन्त प्रवचन और श्रवण की तथा साधना के मूलभूत नसद्धान्तों ंके पठन-पाठन की क्ा आवश्यकता है?

केवल एक ब्रह्म-संकल्प ने अनन्त कोनट ब्रह्माण्ड की रचना की। समय आने पर आप पल मात्र में आत्म-साक्षात्कार कर लेंगे और मोक्ष प्राप्त कर लेंगे। अन्धकारपूणा कमरे में रहने की दशा में आप अन्धकार में भटकते रहते हैं और प्रकाश की खोज में प्रायः सतत प्रयत्नशील रहते हैं। कमरे में रखी हुई वसु्तुओं ंसे आप टकराते हैं और इधर-उधर ठोकर खा कर आप अपना नशर भी फोड लेते हैं। अन्त में जब आप प्रकाश को पाने में सफल हो जाते हैं, तो नफर आपको अन्धकार में भटकना नहीं ंपडता और न कष्ट तथा श्रम ही झेलना पडता है। तत्क्षण ही कमरा प्रकाश से जगमगा उठता है। खोज में ही अनधक समय लगता है। आध्यास्त्मक साधना में भी तैयारी में ही नवशेष समय लगता है।

सतत प्रकाश की आवश्यकता

और यह भी बात है नक जब आपको यह अनुभव हो नक अब आपने सत् को पा नलया है, तब आपको तब तक जागरूक रहना चानहए जब तक नक वह आपकी चेतना का एक अनभन्न अंग नहीं ंबन जाता और जब तक आप उस सत् में वास्तनवक रूप से ननवास करने नहीं ंलग जाते। जब आप नकसी कमरे में दीपक जलाते हैं, तो अन्धकार जाता रहता है; नकनु्तु यनद आप दीपक बुझा दें, तो अन्धकार पुनः वापस आ जाता है। कमरे को सूयोदय होने तक प्रकानशत रखने

के नलए उसमें दीप-ज्योनत की आवश्यकता ननरन्तर बनी रहती है। इसी भााँनत आपकी अन्धकारपूणा हृदय-गुहा में एक दीप नटमनटमा रहा है—वह है भस्क्त अथवा भगवान् की सवाज्ञता, सवाव्यापकता और सवाशस्क्तमत्ता के सामान्य ज्ञान का प्रदीप। आपको इससे नवषय-वस्ुतुओं ंको स्पष्टतः देखने और इस संसार, आिा तथा परमाि के स्वरूप को जानने के नलए यथेष्ट प्रकाश नमलता है; नकन्ुतु यनद आप अपनी असावधानी अथवा भूल से इस नवश्वास में नक मैं अब अपने लक्ष्य को प्राप्त कर चुका हाँ, जान-बूझ कर साधना की उपेक्षा कर इस दीप को बुझा overline 4 , तो आपको अन्धकार पुनः घेर लेगा। जब तक आपके अन्तःकरण में आि-साक्षात्कार-रूपी सूया उनदत नहीं ं होता, तब तक आपको इस दीप को प्रज्वनलत रखना ही होगा और तब सवात्र प्रकाश ही प्रकाश होगा। अन्धकार सदा के नलए पलायन कर जायेगा। प्रकाश आपके स्वरूप का अनभन्न अंग बन जायेगा। अन्धकार आपके ननकट फटकने का दुस्साहस भी नहीं ंकरेगा। इसके पूवा नजस साधना को करने के नलए प्रयास की आवश्यकता पडती थी, अब वह स्वाभानवक हो जाती है। भस्क्त साधक की साधना है और सन्त का स्वभाव। धानमाकता साधक की साधना है और सन्त का स्वभाव। अतः सत्संग और स्वाध्याय-जैसे नवषयों ंका कभी भी पररत्याग नहीं ंनकया जाता। साधक भगवान् की नजन अलौनकक लीलाओं ंका श्रवण और पठन अपनी साधना का आवश्यक अंग मान कर करता है, उन लीलाओं ंको नसद्ध पुरुष भी बडी रुनच से सुनते हैं; क्ोंनंक भगवान् की लीला सुनने में उनकी सहज प्रीनत होती है।

मन में अपने आदशा को बनाये रखने के नलए धमाग्रन्थों ंका ननत्य स्वाध्याय आवश्यक

यनद साधक एक क्षण के नलए भी अपनी सतकाता को नशनथल कर देता है और आध्यास्िक अथवा नैनतक ननिा में ननमग्न हो जाता है, तब ननम्न प्रकृनत पुनः अपना प्रभाव नदखाती है और तत्काल ही उसकी ननष्ा उच्च प्रकृनत से हट कर ननम्न प्रकृनत के प्रनत हो जाती है और यनद दुभााग्यवश ऐसे समय में कहीं ंवह नवषय-पदाथों के सम्पका में आया, तो उसके आध्यास्िक जीवन का अधःपतन हो जाता है। अतः ऐसे नवषम समय में सतकाता और आध्यास्िक जागरूकता को बनाये रखने की अपररहाया आवश्यकता रहती है।

इस प्रकार जागरूकता बनाये रखने का एक प्रशस्त मागा है स्वाध्याय। अपने मन के समक्ष आदशा को जीवन्त रखने के नलए सद्ग्रन्थों ंतथा सन्तों ंके जीवन-चररत्र का ननत्यप्रनत स्वाध्याय एक सबल उपाय है; क्ोंनंक सन्तों ंका जीवन-चररत्र तथा सद्ग्रन्थों ंका स्वाध्याय करते समय मन में शस्क्तशाली नवधेयक नवचारों ंका समुदय होता है और माननसक शस्क्त तत्काल तीव्र होती है। वे नवचार मनुष्य को प्ेरेरणा प्रदान करते, उसे उन्नत बनाते तथा नदन-प्रनतनदन के जीवन की ननम्न वृनत्तयों ंपर नवजय पाने में उसे समथा बनाते हैं। अतः साधक को अपने जीवन में एक नदन भी स्वाध्याय का पररत्याग नहीं ंकरना चानहए।

सदा नवद्याथी बने रहो

सच्चा साधक आध्यास्िक नवकास के नकसी भी स्तर पर क्ों ंन हो, उसे सत्य का प्रनतपादन करने वाले ऋनष-प्रणीत ग्रन्थों ंका स्वाध्याय तथा भगवान् की लीलाओं ंका श्रवण कभी भी नहीं ंछोडना चानहए। क्ा आप जन्मजात मुनन तथा पररव्राजक शुकदेव जी से अनधक उन्नत हैं? क्ा आप उन महनषायों ंसे अनधक उन्नत हैं जो शुक से श्रीमद्भागवत की कथा सुनने के नलए नैनमषारण्य

में एकनत्रत हुए थे? इन महिाओं ंके प्रोज्ज्वल आदशों से नशक्षा ग्रहण कीनजए। सदा साधक बने रनहए, अध्यिा-ज्ञान के नपपासु बने रनहए। सदा नवद्याथी बने रनहए। केवल वही व्यस्क्त वृद्ध है, जो समझता है नक उसने पयााप्त ज्ञान प्राप्त कर नलया है और अब अनधक ज्ञान प्राप्त करने की उसे आवश्यकता नहीं ंरही। वह व्यस्क्त जीते-जी ही मरे के समान है नजसमें भगवान् की लीला तथा आध्यास्कि प्रवचन सुनने की तीव्र लालसा न हो। यद्यनप अनानद काल से लक्ष-लक्ष ऋनष-मुनन और योगी जन उस परम सत्य का वणान करते चले आ रहे हैं, नफर भी वह अक्षुण्ण ही बना हुआ है और यनद आप उस सत्य के नवषय में और अनधक जानने, और अनधक अभ्यास करने तथा और अनधक गम्भीर अनुभूनत प्राप्त करने के नलए अपने नवोत्साह और उत्कण्ठा को बनाये रख सके, तो आप न केवल अपनी वृद्धावसथा को ही वरन् मृतुयु को भी दूर भगा सकते हैं।

स्वाध्याय िारा स्खलन से बचाव

इसके साथ ही यह भी स्मरण रस्खए नक आपके चारों ंओर भौनतकता का वातावरण छाया हुआ है। यनद आप केवल एक नदन भी नशनथल रहते हैं, तो आपके चतुनदाक् फैली हुई आसुरी शस्क्तयों ंको एक सुअवसर नमल जाता है और वे उपिव करना आरम्भ कर देती हैं। सीढ़ी के ऊपरी नसरे से यनद आप गेंद नीचे की ओर लुढ़कायें, तो वह पल मात्र में भूनम तक पहुँच जाती है; नकनुतु उसी गेंद को यनद ऊपर ले जाना हो, तो नकतना समय लगाना पडेगा ! एक क्षण की लापरवाही से बहुत अनधक हानन हो सकती है। जीवन अल्प है, समय तेजी से भागा जा रहा है। शैतान, माया, मार अथवा दुष्ट मन-जैसे दुद्धाषा शतुरु से संग्राम में इतने अनधक प्रयास से आपने जो सथान उसके हाथों ंसे नलया है, उसे एक इंच भी छोडना ठीक न होगा।

सतं्संग और स्वाध्याय-उभय रक्षक

अपने काम के साथ-ही-साथ जप, ध्यान, स्वाध्याय, सनिचार और सद्व्यवहार करते रनहए। बन्दर के समान चंचल मन को एक क्षण के नलए भी नवश्राम न दें। ऐसी अवसथा में सतं्संग और आध्यास्कि ग्रन्थ आपकी बडी सहायता करते हैं। वे आपके रक्षक हैं। इन सद्ग्रन्थों ंसे नकतने सुन्दर नवचार आपके पास तक पहुँचते हैं। धमाग्रन्थों ंका स्वाध्याय बडी सावधानी से कीनजए। उनकी नजन पंस्क्तयों ंका आपके जीवन से सीधा सम्बन्ध हो, उनें् रेखांनकत करते जाइए। अवकाश के समय उनका मनन कीनजए। इस भाँनत आप देखेंगे नक आप नकतनी ही बाधाओं ंको पार कर चुके हैं और नकतने ही पतन के गता लंघन कर चुके हैं। क्ा आपका मन उन पंस्क्तयों ंको बार-बार पढ़ना नहीं ंचाहता? आपको मोह-ननिा में रखने के नलए माया का यही सशक्त अस्त्र है। सावधान ! क्ा आप पुनः पुनः एक ही प्रकार का भोजन नहीं ंकरते ? वे आध्यास्कि वाक् आपके हृदय-पटल पर जब तक अनमट रूप से अंनकत नहीं ंहो जाते, जब तक वे आपके स्वभाव के अनभन्न अंग नहीं ंबन जाते, तब तक उन वाक्ों ंकी बार-बार पुनरावृनत्त करते रनहए।

पुनरावृनत्त से अन्तःशस्क्त की संवृस्द्ध

इससे आपके भीतर ननरोध-संस्कार का दुगा नननमात होगा। पुनरावृनत्त से बल नमलता है। पुनरावृनत्त से नवचार आपके हृदय तथा मन के अन्तरतम प्रकोष् में प्रवेश कर जाते हैं। वे नवचार

आपके अवचेतन मन में एक-एक कर एकनत्रत होते रहते हैं। कुनवचारों ्का मूलोचे्छेदन तथा नवनाश हो जायेगा। आपको पता भी नहीं ्चलेगा नक आपके अन्दर क्ा आश्चयाजनक पररवतान घनटत हुआ
है। एक ही आध्यास्कि नवषय को बार-बार पढ़ने का ऐसा ही शुभकारी प्रभाव होता है। इसी कारण हमारे पूवाजों ्ने गीता, रामायण, भागवत आनद ग्रन्थों ्को ननष्ा और आसथा के साथ ननत्यप्रनत पढ़ने पर इतना बल नदया है। इनसे आपकी अन्त:शस्क्त की संवृस्द्ध होगी। आपका संकल्प बलवान् होगा। इस भाँनत जब आपकी प्रकृनत पूणात: रूपान्तररत हो जायेगी, तो ध्यान के एक ही प्रयास से आप नननवाकल्प समानध अथवा अनतचैतन्यावसथा को प्राप्त होंगें। आप एक पल में भगवत्-साक्षात्कार कर लेंगे।

-स्वामी शिदानन्द

श्री स्वामी नशवानन्द सरस्वती

८ नसतम्बर, १८८७ को सन्त अप्पय्य दीनक्षतार तथा अन्य अनेक ख्यानत-प्राप्त नविानों ्के सुप्रनसद्ध पररवार में जन्म लेने वाले श्री स्वामी नशवानन्द जी में वेदान्त के अध्ययन एवं अभ्यास के नलए समनपात जीवन जीने की तो स्वाभानवक एवं जन्मजात प्रवृनत्त थी ही, इसके साथ-साथ सबकी सेवा करने की उत्कण्ठा तथा समस्त मानव-जानत से एकव की भावना उनमें सहजात ही थी।

सेवा के प्रनत तीव्र रुनच ने उन्ें नचनकत्सा के क्ेत्र की ओर उन्मुख कर नदया और जहाँ उनकी सेवा की सवाानधक आवश्यकता थी, उस ओर शीघ्र ही वे अनभमुख हो गये। मलाया ने उन्ें अपनी ओर खींचं नलया। इससे पूवा वह एक स्वास्थ्य-सम्बन्धी पनत्रका का सम्पादन कर रहे थे, नजसमें स्वास्थ्य-सम्बन्धी समस्याओं ्पर नवसूतृत रूप से नलखा करते थे। उन्ोंनें पाया नक लोगों ्को सही जानकारी की अत्यनधक आवश्यकता है, अतः सही जानकारी देना उनका लक्ष्य ही बन गया।

यह एक दैवी नवधान एवं मानव जानत पर भगवान् की कृपा ही थी नक देह-मन के इस नचनकत्सक ने अपनी जीनवका का त्याग करके, मानव की आिा के उपचारक होने के नलए त्यागमय जीवन को अपना नलया। १९२४ में वह ऋनषकेश में बस गये, यहाँ कठोर तपस्या की और एक महान् योगी, सन्त, मनीषी एवं जीवन्मुक्त महािा के रूप में उद्भानसत हुए।

१९३२ में स्वामी नशवानन्द जी ने 'नशवानन्द आश्रम' की सथापना की; १९३६ में 'द निवाइन लाइफ सोसायटी' का जन्म हुआ; १९४८ में 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकेिमी' का शुभारम्भ नकया। लोगों ्को योग और वेदान्त में प्रनशनक्षत करना तथा आध्यास्कि ज्ञान का प्रचार-प्रसार करना इनका लक्ष्य था। १९५० में स्वामी जी ने भारत और लंका का ि्ुत-भ्रमण नकया। १९५३ में स्वामी जी ने 'वर्ल्ा पानलयामेंट ऑफ ररलीजन्स' (नवश्व धमा सिैलन) आयोनजत नकया। स्वामी जी ३०० से अनधक ग्रन्थों ्के रचनयता हैं तथा समस्त नवश्व में नवनभन्न धमााँ, जानतयों ्और मतों ्के लोग उनके

नशष्य हैं। स्वामीजीकी कृनतयों ंकाअध्ययनकरनापरम ज्ञान के स्रोत का पान करना है। १४ जुलाई, १९६३कोस्वामी जीमहासमानधमेंलीनहोगये।

ADIVINELIFESOCIETYPUBLICATION HS 289 60/-